

বেদাঙ্গের মধ্যে অন্যতম হল ছন্দ। পাণিনীয়শিক্ষায় বেদপুরুষের পাদবিশেব হল ছন্দ - 'ছন্দঃ পাদৌ তু বেদস'। বৈদিক সাহিত্যে ছন্দের গুরুত্ব ছিল অপরিসীম, কারণ ছন্দোজ্ঞান ব্যতীত বেদের অর্থবোধ অসম্ভব। বৈদিক ছন্দ সাতটি। 'চন্দয়তি আহুদয়তি চন্দ্যতে অনেন বা' - এই বিষ্ণহে আহুদনার্থক চন্দ্-ধাতুর উত্তর 'চন্দেরাদেশ ছঃ' এই উণাদিসূত্রের দ্বারা অসুন্ধ-প্রত্যয়ে এবং ছ-আদেশে 'ছন্দঃ' শব্দ নিষ্পত্ত হয়েছে। আনন্দ দান করে যে, তাকে ছন্দ বলে। পরবর্তী কালে মহৰ্বি কাত্যায়ন তাঁর সর্বানুকূলণী থল্যে ছন্দের লক্ষণ করেছেন - 'যদক্ষরপরিমাণং তচ্ছন্দঃ'। এখানে অক্ষর পরিমাণের কথা বলা হয়েছে। আচার্য পিঙ্গলও ছন্দঃসূত্রে বলেছেন - 'মাত্রাক্ষরসংখ্যানিয়তা বাক ছন্দঃ'। অত এব মাত্রা ও অক্ষরের দ্বারা নিরূপিত পদ্যকে 'ছন্দ' নামে অভিহিত করা হয়। বৈদিক ছন্দকে অলোকিক এবং ধূপদী সাহিত্যের ছন্দকে লোকিক ছন্দ নামে অভিহিত করা হয়।

► **ছন্দোমঞ্জুরী** ► আচার্য গঙ্গাদাস ছন্দোমঞ্জুরী থল্য রচনা করেন। তাঁর পিতার নাম গোপাল দাস এবং মাতার নাম সন্তোষা। পণ্ডিতদের মতে গঙ্গাদাস চতুর্দশ বা পঞ্চদশ শতাব্দীয় ছিলেন। সন্তুষ্টবৎঃ কেদারভট্টের 'বৃত্তরত্নাকর' থল্যের অনুকরণে ছন্দোমঞ্জুরী থল্য রচনা করে ছিলেন। বৃত্তরত্নাকরে ১৩৬টি ছন্দের আলোচনা আছে আর ছন্দোমঞ্জুরী থল্যে ২৭৬ টি ছন্দের আলোচনা হয়েছে।

গ্রন্থটি ছয়টি স্তবকে বিভক্ত। প্রথম স্তবকে বৃত্ত, জাতি ও বৃত্তের ভেদ প্রভৃতি বর্ণিত হয়েছে। দ্বিতীয় স্তবকে সম্বৃত ছন্দের লক্ষণ আলোচিত হয়েছে। তৃতীয় স্তবকে উপচিত্র, বেগবতী প্রভৃতি ১৬টি অর্ধসমবৃত্তের আলোচনা আছে। চতুর্থ স্তবকে উদ্গতা, সৌরভক প্রভৃতি বিষমবৃত্ত উদাহরণসহ ব্যাখ্যাত হয়েছে। পঞ্চম স্তবকে আর্যার বিভিন্ন প্রকারভেদের বর্ণনা আছে এবং বৰ্ষ স্তবকে গদ্যপ্রকরণ নামক একটি অংশ আছে। গ্রন্থটির বৈশিষ্ট্য হল - এর অধিকাংশ উদাহরণ শ্লোক থল্যকারের স্বরচিত এবং যতির বিভিন্ন সাংস্কৃতিক চিহ্ন (বেদ, সূর্য, রস প্রভৃতি) ব্যবহৃত হয়েছে।

► **পদ্য** ► সংস্কৃতসাহিত্য গদ্য ও পদ্য ভেদে দ্বিবিধ। নির্দিষ্ট অক্ষর বা মাত্রার দ্বারা নিয়ন্ত্রিত পদসমষ্টিকে পদ্য বলা হয় - 'ছন্দোবন্ধপদং পদ্যম'। প্রতিটি পদ্যে চারটি করে চরণ বা পাদ থাকে - 'পদ্যঃ চতুষ্পদী'। পদ্য আবার দুই প্রকার - বৃত্ত জাতি - 'তচ্চ বৃত্তং জাতিরিতি দ্বিধা'। প্রতিচরণে নির্দিষ্ট সংখ্যানুসারে রচিত পদ্যের নাম বৃত্ত - 'বৃত্তমক্ষরসংখ্যাতম'। যথা - ইন্দ্রবজ্রা ছন্দে চারটি পাদ বা চরণ একাদশাক্ষরবিশিষ্ট। পক্ষান্তরে মাত্রার সংখ্যানুসারে রচিত পদ্যের নাম জাতি - 'জাতিমাত্রাকৃতা ভবেৎ'। পদ্যের ত্রুত্বস্বরকে একমাত্রা, দীর্ঘস্বরকে দুইমাত্রা, প্লুতস্বরকে তিনিমাত্রা এবং ব্যঙ্গনবর্ণকে অর্ধমাত্রা বলে -

'একমাত্রা ভবেদ হুঙ্গো দ্বিমাত্রা দীর্ঘ উচ্যতে।

ত্রিমাত্রস্তু প্লুতো জ্ঞয়ো ব্যঙ্গনবর্ধমাত্রকম'॥

আর্য ছন্দ মাত্রাভিত্তিক বলে এই ছন্দে রচিত পদ্যকে 'জাতি' বলা হয়। আর্য ছন্দের প্রথম ও তৃতীয় পাদে দ্বাদশ মাত্রা, দ্বিতীয়পাদে অষ্টাদশ মাত্রা এবং চতুর্থপাদে পঞ্চদশ মাত্রা থাকে -

'যস্যাঃ পাদে প্রথমে দ্বাদশ মাত্রাস্তথা তৃতীয়েহপি।

অষ্টাদশ দ্বিতীয়ে চতুর্থকে পঞ্চদশ সার্যা॥।

❖ পদ্ম -

সংস্কৃতসাহিত্য গদ্য-পদ্যভেদাদ দ্঵িবিধম। নির্দিষ্টাক্ষরেণ নির্দিষ্টমাত্রায় বা নিয়ন্ত্রিত পদজাতমেব পদ্যমিতি উচ্যতে। তদুক্তম আচার্যগঞ্জাদাসেন 'ছন্দোমঞ্জুরী' ইতি গ্রন্থে - 'ছন্দোবন্ধপদং পদ্যম' ইতি। প্রত্যেক পদ্য চত্বারঃ পাদাঃ চরণাঃ বা সন্তি - 'পদ্যঃ চতুর্থদী' ইতি। পদ্যঃ পুনঃ দ্বিবিধম - বৃত্ত জাতি: চেতি। তথা চোচ্যতে - 'তচ্চ বৃত্তং জাতিরিতি দ্বিধা' ইতি। প্রতিচরণ নির্দিষ্টস-

ख्यानुसारं रचितं पद्यं वृत्तमिति कथ्यते - 'वृत्तमध्यरसंख्यातम्' इति । यथा - इन्द्रवज्राच्छन्दसि चत्वारः पादाः एकादशाक्षरविशिष्टाः । पक्षान्तरेण मात्रायाः संख्यानुसारेण रचितं पद्यं जातिरिति अभिधीयते - 'जातिर्मात्राकृता भवेत्' इति । पद्यस्य हस्वस्वरः हि एकमात्रा, दीर्घस्वरः हि द्विमात्रा, प्लुतस्वरः हि त्रिमात्रा, व्यञ्जनवर्णः हि अर्धमात्रा कथ्यते । तदुक्तम् -

'एकमात्रा भवेद् हस्वो द्विमात्रा दीर्घं उच्यते ।

त्रिमात्रस्तु प्लुतो ज्ञेयो व्यञ्जनमर्धमात्रकम् ॥' इति ।

आर्याछ्निदः मात्राभित्तिकम् । अतः अनेन छन्दसा रचितं पद्यं जातिरिति कथ्यते । आर्याछ्निदसः प्रथमे तृतीये च पादे द्वादशमात्राः, द्वितीये पादे अष्टादशमात्राः, चतुर्थपादे च पञ्चदशमात्राः सन्ति । तथा चोच्यते -

'यस्याः पादे प्रथमे द्वादश मात्रास्तथा तृतीयेऽपि ।

अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश सार्या ॥' इति ।

► बृह्तः ➡ बृह्त तिन प्रकार - समबृह्त, अर्धसमबृह्त ओ विषमबृह्त - 'सममर्थसम॑ बृह्त॒ विषमग्रेष्टि त॒ त्रिधा' । ये बृह्तेर चाराटि पादे वा चरणे गुरुलघुक्रमे समानसंख्यक अक्षर थाके, ताके समबृह्त बला हय । यथा - इन्द्रवज्रा छन्दे चाराटि पाद वा चरण एकादशाक्षरविशिष्ट । यथा -

'अर्थे हि कन्या परकीय एव
तामद्य सम्प्रेष्य परिग्रहीतूः ।
जातो ममाय॑ विशदः प्रकाम॑
प्रत्यपितन्यासो इवान्तराज्ञा ॥'

लोकिक संस्कृत पद्येर अधिकांशहि समबृह्त ।

ये बृह्ते प्रथम ओ तृतीय पादेर अक्षरसंख्या समान एवं द्वितीय ओ चतुर्थ पादेर अक्षरसंख्या समान, ताके अर्धसमबृह्त बला हय । यथा - पूच्चिताग्रा, वियोगिनी इत्यादि । पूच्चिताग्रा छन्देर प्रथम ओ तृतीय पादे बारोटि अक्षर एवं द्वितीय ओ चतुर्थ पादे तेराटि करे अक्षर थाकाय एই छन्दाटि अर्धसमबृह्त । यथा -

'तूरगखूरहत्स्था हि रेणुः
विटपविष्टजलार्द्दवक्ष्लेषु ।
पतति परिणतारुणप्रकाशः
शलभसमूह इवाग्रमद्वमेषु ॥'

ये बृह्तेर चाराटि पाद वा चरण भिन्न गुरुलघु अक्षरेर द्वारा गठित, ताके विषमबृह्त बला हय । यथा - उद्गता छन्देर चाराटि पादेर अक्षर भिन्न भिन्न । यथा -

'बिललास गोपरमणीषु
तरनितनयाप्रभोदगता ।
कृम्मनयनचकोरयुगे
दधती सुधांशुकिरणोमिविभ्रमम् ॥'

आचार्य गणेशास 'छन्दोमञ्जरी' ग्रन्थे लक्षण करेहेन -

'सम॑ समचतुर्ष्पाद॑ भवत्यर्थसम॑ पुनः ॥

आदित्तीयवद् यस्य पादस्तुर्यो द्वितीयवद् ।

भिन्नचतुर्ष्पाद॑ विषम॑ परिकीर्तितम् ॥'

❖ वृत्तम् -

आचार्यगङ्गादासेन 'छन्दोमञ्जरी' इति ग्रन्थे वृत्तस्य लक्षणं कृतम् - 'वृत्तमधरसंख्यातम्' इति । अर्थात् प्रतिचरणं निर्दिष्टसंख्यानुसारं रचितं पद्यं वृत्तमिति कथ्यते । तच्च वृत्तं त्रिविधम् - समवृत्तम्, अर्धसमवृत्तम्, विषमवृत्तं चेति । तदुक्तम् आचार्यगङ्गादासेन 'छन्दोमञ्जरी' इति ग्रन्थे - 'समर्थसमं वृत्तं विषमञ्चेति तत्त्रिधा' इति ।

यस्य वृत्तस्य पादचतुष्टये गुरुलघुक्रमेण समानसंख्यकाक्षराणि सन्ति, तत् समवृत्तमिति उच्यते । यथा - इन्द्रवज्राच्छन्दसि चत्वारः पादाः एकादशाक्षरविशिष्टाः भवन्ति । यथा -

‘अर्थो हि कन्या परकीय एव
तामद्य सम्प्रब्धं परिग्रहीतुः ।
जातो ममायं विशदः प्रकामं
प्रत्यर्पितन्यास इवान्तरात्मा ॥’ इति ।

लौकिकसंस्कृतस्य पद्यानि प्रायशः समवृत्तच्छन्दोबद्धानि ।

यस्य वृत्तस्य प्रथमस्य तृतीयस्य च पादस्य अक्षरसंख्या समाना तथा द्वितीयस्य चतुर्थस्य च पादस्य अक्षरसंख्या समाना वर्तते, तत् अर्धसमवृत्तमिति उच्यते । यथा - पुष्पिताग्रा, वियोगिनी चेत्यादीनि । पुष्पिताग्राच्छन्दसि प्रथमे तृतीये च पादे द्वादश अक्षराणि तथा द्वितीये चतुर्थे च पादे त्रयोदश अक्षराणि वर्तन्ते । अतः तत् छन्दः अर्धसमवृत्तमिति कथ्यते । यथा -

‘तुरगखुरहतस्तथा हि रेणुः
विटपविषक्तजलार्दवल्कलेषु ।
पतति परिणतारुणप्रकाशः
शलभसमूह इवाश्रमद्वमेषु ॥’ इति ।

यस्य वृत्तस्य पादचतुष्टये गुरुलघुक्रमेण समानसंख्यकाक्षराणि न सन्ति, तत् विषमवृत्तमिति उच्यते । यथा -

‘विललास गोपरमणीषु
तरणितनयाप्रभोदगता ।
कृष्णनयनचकोरयुगे
दधती सुधांशुकिरणोर्मिविभ्रमम् ॥’ इति ।

अस्मिन् उद्गताच्छन्दसि चत्वारः पादाः एव भिन्नभिन्नाक्षरविशिष्टाः भवन्ति । आचार्यगङ्गादासेन 'छन्दोमञ्जरी' इति ग्रन्थे वृत्तभेदानां लक्षणं कृतम् -

‘समं समचतुष्पादं भवत्यर्थसमं पुनः ॥
आदिस्तृतीयवद् यस्य पादस्तुर्यो द्वितीयवत् ।
भिन्नचिह्नचतुष्पादं विषमं परिकीर्तिम् ॥’ इति ।

* * *

► अक्षर →

'न श्वरति' एই विथाहे श्वर-धातुर उत्तर अच-प्रत्यये श्वर-शब्द निष्पन्न हय । 'न श्वरम् - अश्वरम्', नग्नतेपुरवस्मास । अक्षर-शब्देर यदिओ अनेक अर्थ आছे, तबुও एখানে अक्षर-शब्दের द্বারা श्वरকे बोানো হয়েছে । आचार्यगङ्गादास 'ছন्दोमञ्जरी' থেকে অক्षর-শব্দের লক্ষণ করেছেন -

‘सव्यञ्जनः सानुञ्जारः शुञ्चो वापि श्वरोऽश्वरम्’।

अर्थात् ब্যञ्जनযুক্ত, অনুञ্জারযুক্ত অথবা শুઞ্চ শ্বরকে অক্ষর বলে । অন্যত্র বলা হয়েছে - বাগ্যস্ত্রের স্বল্পতম প্রয়াসে যে ধৰনি উৎপন্ন হয়, তারই নাম অক্ষর । অক্ষর-পদের দ্বারা কেবল শ্বরকে এখানে বুঝতে হবে । यथा -

‘प्रभाते यः स्मरेन्नित्यं दुर्गा दुर्गाक्षरद्वयम्।

आपदस्त्वं नश्यन्ति तमः सूर्योदये यथा॥’

एकाने ‘दुर्गा’ एই शब्देर मध्ये ‘द्, उ, र्, ग्, आ’ - एই पाँचटि वर्ण आছे। तादेर मध्ये अक्षर वा स्वर हल दृष्टि - ‘उ, आ’।

► अक्षरम् ►

‘न क्षरति’ इति विग्रहे क्षर-धातोः उत्तरम् अच्-प्रत्ययेन क्षर-शब्दः निष्पद्यते। ‘न क्षरम् - अक्षरम्, नव्यतपुरुषसमासः’। अक्षर-शब्दस्य यद्यपि बहवः अर्थाः विद्यन्ते तथापि अत्र अक्षर-शब्देन स्वर एव जातव्यः। आचार्य-गङ्गादासेन छन्दोपञ्चरी इति ग्रन्थे अक्षरस्य लक्षणं कृतम् -

‘सव्यञ्जनः सानुस्वारः शुद्धो वापि स्वरोऽक्षरम्’।

अर्थाद् व्यञ्जनयुक्तः, अनुस्वारयुक्तः अथवा शुद्धः स्वरः एव अक्षरमिति कथ्यते। अक्षर-पदेन केवलं स्वरवर्णः एव बोधव्यः।

यथा - ‘प्रभाते यः स्मरेन्नित्यं दुर्गा दुर्गाक्षरद्वयम्।

आपदस्तस्य नश्यन्ति तमः सूर्योदये यथा॥’

अत्र दुर्गा इति शब्दस्य मध्ये ‘द्, उ, र्, ग्, आ’ इति पञ्च वर्णाः सन्ति। तेषु अक्षरं स्वरः वा हि - ‘उ, आ’ इति द्वयमेव वर्तते। अत एव अक्षर-पदेन केवलं स्वर एव बुध्यते, न तु व्यञ्जनम्।

► गण ► आचार्य गङ्गादास दशाटि सांखेकतिक अक्षरेर द्वारा छन्दोनिर्णयेर पद्धति तूले धरेछेन। ताँर भाषाय -

‘म्यरञ्जजनगेलाञ्जेरेभिर्देशभिरक्षरैः।

समस्तं वाङ्मयं व्याप्तं त्रैलोक्यमिव विमूणा॥’

अर्थात् विश्व येमन त्रिभुवन व्याप्त करे रयेछेन तेमन म्, य, र, स, त, ज, भ, न, ग एवं ल - एই दशाटि अक्षरेर द्वारा समस्त वृत्त छन्द परिव्याप्त हयेहे। उल्लिखित दशाटि अक्षरै छन्दःशास्त्रे दशाटि ‘गण’ नामे परिचित। दशाटि गणेर मध्ये ‘ग’ एवं ‘ल’ बादे अवशिष्टे आटटि गण तिन-अक्षरविशिष्टै, ‘ग’ एवं ‘ल’ एकटि अक्षरेर द्वारा गठित। पदेय वा श्लोके लघु एवं गुरु बर्णेर अवस्थानभेदे गणेर एই भिन्नता। लघु वर्ण वा अक्षरके ‘U’ एই चिह्नेर द्वारा एवं गुरु अक्षरके ‘-’ एই चिह्नेर द्वारा निर्देश करा हय। गणेर स्वरूप प्रसंगेग आचार्य गङ्गादास बलेछेन -

‘मस्तिगुरुस्त्रिलघुश्च नकारो

भादिगुरुः पूनरादिलघुर्यः।

जो गुरुमध्यगतो रलमध्यः

सोहन्तगुरुः कथितोहन्तलघुस्तः॥।

गुरुरेको गकारस्तु लकारो लघुरेककः।’

१) मगण - तिनाटि वर्ण गुरु - श्रीदुर्गा।

२) नगण - तिनाटि वर्ण लघु - भवति।

३) भगण - आदि वर्ण गुरु एवं अन्य वर्ण लघु - संहर।

४) यगण - आदि वर्ण लघु एवं अन्य वर्ण गुरु - महेशः।

५) जगण - मध्य वर्ण गुरु एवं अन्य वर्ण लघु - शिवाय।

६) रगण - मध्य वर्ण लघु एवं अन्य वर्ण गुरु - चतुर्माः।

७) सगण - अन्तवर्ण गुरु एवं वाकी वर्ण लघु - यमुना।

८) तगण - अन्तवर्ण लघु एवं वाकी वर्ण गुरु - जीवन्ति।

९) ग-गण - एकटि गुरु वर्ण - श्रीः।

१०) ल-गण - एकटि लघु वर्ण - हि।

छन्दोनिर्णय करार जन्य प्रथमे श्लोकेर प्रतिटि चरणे यतगुलि वर्ण आছे, सेगुलिके तिन तिन वर्णे भाग करे शेषे यदि दूटि वा एकटि वर्ण थाके, ताहले तादेर एकटि करे पृथक्भाबे धराते हवे। तारपर तादेर माथाय लघुगुरुर चिह्न दिते हवे। यथा -
 ‘अर्थो हि कन्या परकीय एव’ (पादान्त गुरु)।

प्रस्तुत श्लोकपादे ‘त-त-ज-ग-ग’ गण थाकाय इन्द्रवज्ञा छन्द (‘स्यादिन्द्रवज्ञा यदि तौ जगौ गः’) हयेछे।

❖ गणः -

आचार्यगङ्गादासेन सर्वाणि वृत्तच्छन्दांसि दशसाङ्केतिकाक्षरैः निर्देशितानि। तदुक्तम् आचार्यगङ्गादासेन ‘छन्दोमञ्जरी’ इति ग्रन्थे -

‘प्यरस्तजभन्गैर्लन्तैरेभिर्दशभिरक्षरैः।

समस्तं वाङ्मयं व्याप्तं त्रैलोक्यमिव विष्णुना ॥’ इति।

अर्थात् विष्णुना यथा त्रिभुवनं परिव्याप्तं तथैव म, य, र, स, त, ज, भ, न, ग, च - चेति दशाक्षरैः सर्वाणि वृत्तच्छन्दांसि परिव्याप्तानि। उल्लिखितानि दश अक्षराणि छन्दःशास्त्रे दश गणाः इति नामा परिचिताः। दशगणेषु ग, ल चेति द्वयं विहाय अवशिष्टाः अष्टौ गणाः अक्षरविशिष्टाः। केवलं ग-गणः ल-गणः चेति एकाक्षरविशिष्टः भवति। पद्ये श्लोके वा लघु-गुरुवर्णनाम् अवस्थानभेदाद् गणस्य भिन्नता परिलक्ष्यते। लघुवर्णः ‘U’ इति चिह्नेन तथा गुरुवर्णः ‘-’ इति चिह्नेन निर्देशितः। आचार्यगङ्गादासेन ‘छन्दोमञ्जरी’ इति ग्रन्थे गणस्य लक्षणं कृतम् -

‘मस्त्रिगुरुस्त्रिलघुश्च नकारो भादिगुरुः पुनरादिलघुर्यः।

जो गुरुमध्यगतो रलमध्यः सोऽन्तगुरुः कथितोऽन्तलघुस्तः ॥

गुरुरेको गकारस्तु लकारो लघुरेकः ।’ इति।

गणानामुदाहरणम् -

- १) मगणः - त्रयः गुरुवर्णाः - श्रीदुर्गा ।
- २) नगणः - त्रयः लघुवर्णाः - भवति ।
- ३) भगणः - आदिवर्णः गुरुः, अवशिष्टौ वर्णौ लघू - संहर ।
- ४) यगणः - आदिवर्णः लघुः, अवशिष्टौ वर्णौ गुरु - महेशः ।
- ५) जगणः - मध्यवर्णः गुरुः, आद्यन्तवर्णौ च लघू - शिवाय ।
- ६) रगणः - मध्यवर्णः लघुः, आद्यन्तवर्णौ च गुरु - चन्द्रमाः ।
- ७) सगणः - अन्तवर्णः गुरुः, अवशिष्टौ वर्णौ लघू - यमुना ।
- ८) तगणः - अन्तवर्णः लघुः, अवशिष्टौ वर्णौ गुरु - जीवन्ति ।
- ९) ग-गणः - एकः वर्णः गुरुः - श्रीः ।
- १०) ल-गणः - एकः वर्णः लघुः - हि ।

छन्दोनिर्णयार्थ प्रथमे श्लोकस्य प्रतिचरणं ये वर्णाः सन्ति, ते आदितः त्रिवर्णः विभज्यन्ते। ततः अवशिष्ट वर्णद्वयम् एकैकशः विभज्यते। यदि एकः वर्णः स्यात् तर्हि एकः एव शिष्यते। ततश्च तेषां वर्णनां मस्तकोपरि लघुगुरुचिह्नं प्रदातव्यम्। यथा -

‘अर्थो हि कन्या परकीय एव’ (पादान्तः गुरुः)।

प्रस्तुतश्लोकपादे त, त, ज। ग, ग चेति गणानां विद्यमानत्वाद् इन्द्रवज्ञाच्छन्दः जायते। तदुक्तं तस्य लक्षणम् -

‘स्यादिन्द्रवज्ञा यदि तौ जगौ गः’। इति।

❖ लघु-गुरु-निर्णय - छन्दोनिर्णय कराते गेले सबार आगे लघु ओ गुरु वर्णेर ज्ञान आवश्यक। साधारणतः लघु वर्ण वा अक्षरके ‘U’ एই चिह्नेर द्वारा एवं गुरु अक्षरके ‘-’ एই चिह्नेर द्वारा निर्देश करा हय। वर्णेर माथाय लघु-गुरुर चिह्न दिते

হবে। লঘু-গুরু-নির্ণয় করতে না পারলে সংস্কৃতে ছন্দোনির্ণয় করা অসম্ভব। বর্ণের লঘু ও গুরু নির্ণয়প্রসঙ্গে গঙ্গাদাস বলেছেন -

‘সানুস্বারশ্চ দীর্ঘশ্চ বিসর্গী চ গুরুভৰ্বেৎ।

বর্ণঃ সংযোগপূর্বশ্চ তথা পাদান্তগোহপি বা।।’

অর্থাৎ অনুস্বারযুক্ত বর্ণ, দীর্ঘস্বরযুক্ত বর্ণ, বিসর্গযুক্ত বর্ণ, সংযুক্ত বর্ণের পূর্ববর্ণ এবং পাদান্তস্থিত বর্ণ বিকল্পে গুরু হয়। যথা -

১) সানুস্বারশ্চ - অনুস্বারযুক্ত বর্ণ গুরু হয়। যথা - তম, তং।

২) দীর্ঘশ্চ - দীর্ঘস্বরযুক্ত বর্ণ (আ, ই, উ, ঝৰ্খ, এ, ঔ, ও, ঞ) গুরু হয়। যথা - সা, কালী।

৩) বিসর্গী - বিসর্গযুক্ত বর্ণ গুরু হয়। যথা - সঃ।

৪) বর্ণঃ সংযোগপূর্বশ্চ - সংযুক্ত বর্ণের পূর্ববর্ণ গুরু হয়। যথা - দক্ষঃ (ক + ষ - ক্ষ)

৫) পাদান্তগোহপি বা - পাদান্তস্থিত বর্ণ বিকল্পে গুরু হয়। যথা - ‘অর্থো হি কন্যা পরকীয় এব’ - এখানে পাদের অন্তবর্ণ লঘু হলেও ছন্দের লক্ষণ অনুরোধে বিকল্পে গুরু হয়েছে।

এছাড়া, বাকী সমস্ত বর্ণ লঘু (অ, ই, উ, ঝ) হয়।

❖ লঘুগুরুনির্ণয়: -

ছন্দোনির্ণয়ার্থম্ আদৌ লঘু-গুরুবর্ণস্য জ্ঞানম্ আবশ্যকম্। সাধারণত: লঘুবর্ণ: ‘U’ ইতি চিহ্নেন তথা গুরুবর্ণ: ‘-’ ইতি চিহ্নেন নির্দেশিত।। বর্ণানাং মস্তকোপরি লঘুগুরুচিহ্নে প্রদাতব্যম্। লঘুগুরুনির্ণয়াভাবে সংস্কৃতে ছন্দোনির্ণয়: অসম্পূর্ণ। বর্ণস্য লঘুগুরুনির্ণয়প্রসংজ্ঞে আচার্যগঞ্জাদাসেন ‘ছন্দোমঞ্জরী’ ইতি গ্রন্থে লক্ষণং কৃতম্ -

‘সানুস্বারশ্চ দীর্ঘশ্চ বিসর্গী চ গুরুভৰ্বিত।

বর্ণঃ সংযোগপূর্বশ্চ তথা পাদান্তগোহপি বা।।’ ইতি।

অর্থাৎ অনুস্বারযুক্তঃ বর্ণঃ, দীর্ঘস্বরযুক্তঃ বর্ণঃ, বিসর্গযুক্তবর্ণঃ, সংযুক্তবর্ণস্য পূর্ববর্ণঃ তথা পাদান্তস্থিতঃ বর্ণঃ বিকল্পে গুরুঃ ভবতি। যথা -

১) অনুস্বারযুক্তঃ বর্ণঃ গুরুঃ ভবতি। যথা - তং, তম্।

২) দীর্ঘস্বরযুক্তঃ বর্ণঃ গুরুঃ ভবতি। যথা - সা, কালী।

৩) বিসর্গযুক্তবর্ণঃ গুরুঃ ভবতি। যথা - সঃ, কঃ।

৪) সংযুক্তবর্ণস্য পূর্ববর্ণঃ গুরুঃ ভবতি। যথা - দক্ষঃ (ক + ষ = ক্ষ)।

৫) পাদান্তস্থিতঃ বর্ণঃ বিকল্পেন গুরুঃ ভবতি। যথা - ‘অর্থো হি কন্যা পরকীয় এব’ - অত্র পাদস্য অন্তবর্ণঃ যদ্যপি লঘুঃ ভবতি তথাপি ছন্দসঃ লক্ষণানুসারে বিকল্পেন গুরুঃ জায়তে।

এতানি বিহায় সর্বে বর্ণঃ লঘুবর্ণঃ ভবন্তি। তেন অ, ই, উ, ঞ চেতি চতুরঃ হি লঘুবর্ণঃ ভবন্তি। যথা - অযম্, হি, মধু, ঞ্ছতম্।

❖ যতি - কোন একটি শ্লোককে এক নিঃশ্বাসে পড়া সম্ভব নয়, তার জন্য জিহ্বার বিশ্রামের প্রয়োজন হয়। তাছাড়া, শ্লোকপাঠের মধ্যে সুরমাধুর্য সৃষ্টির জন্যও বিরতির প্রয়োজন হয়। জিহ্বার এই ইঙ্গিত বিশ্রাম স্থানগুলিকে ছন্দঃশাস্ত্রে ‘যতি’ বলা হয়। আচার্য গঙ্গাদাস ‘ছন্দোমঞ্জরী’ গ্রন্থে যতির লক্ষণ করেছেন -

‘যতির্জিহ্বেষ্টবিশ্রামস্থানং কবিভিরুচ্যতে।

সা বিচ্ছেদবিরামাদ্যঃ পদৈবাচ্যা নিজেছ্যা।।’

অর্থাৎ কবিগণ পদ্যপাঠের সময় জিহ্বার ইঙ্গিত বিশ্রামের স্থানকে যতি বলে থাকেন। এই যতিকে বিচ্ছেদ, বিরাম, ছিদ, ভিদ, বিরতি প্রভৃতি নামেও অভিহিত করা হয়।

একাদশাক্ষরবিশিষ্ট শালিনী ছন্দের লক্ষণ হল -

‘मात्तौ गौ चेच्छालिनी वेदलोकैः’।

छन्देर लक्षणे ‘वेदलोकैः’ - एই पदटिर द्वारा यतिर कथा बला हयेछे। ‘वेद’ हच्छे चारटि आर ‘लोक’ हच्छे सातटि। सूतराः शालिनी छन्देर उदाहरणे प्रथम चतुर्थ अक्षरे ओ तार परबर्ती सप्तम अक्षरे यति हवे। येमन -

‘सा निन्दक्ती *स्वानि भाग्यानि बाला*’

उद्धृत श्लोकपादे ‘*’ एই चिह्नेर द्वारा यतिर स्थान निर्देश करा हयेछे।

छन्देर लक्षणे ये विशेष पदेर प्रयोगेर द्वारा विशेष संख्या निर्देशेर माध्यमे यति निर्दिष्ट हय, तार एकटि तालिका प्रदत्त हल -

छन्दोलक्षणे व्यवहृत शब्द	अक्षरसंख्या
१) नेत्र	३
२) वेद, समूद्र, अस्तुधि, अस्ति	४
३) बाण	५
४) ऋतु, रस, रिपु	६
५) अश्व, लोक, मूनि, नग	७
६) वसु, सर्प, भोगी, नाग	८
७) थह	९
८) दिक्, आशा	१०
९) बूद्ध	११
१०) सूर्य, आदित्य	१२

* ये समस्त छन्देर लक्षणेर मध्ये यतिर स्थान निर्देश करा नेहै, से समस्त छन्देर पादाङ्गे यति बुद्धते हवे।

❖ यति: -

कञ्चन श्लोकः एकनिःश्वासेन केनापि पठितुं न शक्यते। तस्मात् जिह्वायाः विश्रामस्य प्रयोजनं वर्तते। अपि च, श्लोकपाठे सुरमाधुर्यसृष्टिनिमित्तमपि विरते: प्रयोजनम् अस्ति। जिह्वायाः ईप्सितं विश्रामस्थानमेव छन्दःशास्त्रे यतिः इति कथयते। आचार्यगङ्गादासेन ‘छन्दोमङ्गरी’ इति ग्रन्थे यते: लक्षणं कृतम् -

‘यतिर्जिह्वेष्टविश्रामस्थानं कविभिरुच्यते।

सा विच्छेदविरामाद्यैः पदैर्वच्या निजेच्छया॥’ इति।

अर्थात् कविगणः पद्याठस्य समये जिह्वायाः ईप्सितविश्रामस्थानमेव यतिरिति कथयति। एषा यतिः विच्छेदः, विरामः, छिदः, भिदः, विरतः चेत्यादिनामभिः अपि अभिहिता भवति।

एकादशाक्षरविशिष्टस्य शालिनीच्छन्दसः लक्षणं हि -

‘मात्तौ गौ चेच्छालिनी वेदलोकैः’ इति।

प्रोक्तस्य छन्दसः लक्षणे ‘वेदलोकैः’ इति पदेन वेद-पदेन चत्वारः, लोक-पदेन च सप्त संख्याः बुध्यन्ते। अतः अस्य छन्दसः श्लोकपादे आदौ चतुर्थवर्णात् परं ततश्च सप्तमवर्णात् परं यतिः भवेत्। प्रस्तुतस्य छन्दसः उदाहरणं यथा -

‘नैवेदानीं * दुःखिताश्क्रवाकाः*

नैवाप्यन्ये* स्त्रीविशेषैर्वियुक्ताः*।

धन्या सा स्त्री *यां तथा वेत्ति भर्ता*

भर्तृस्नेहात्* सा हि दग्धाप्यदाधा*॥’ इति।

उद्धृतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेर यतिनिर्देशः विहितः।

छन्दसः लक्षणे येषां विशेषपदानां प्रयोगैः विशेषसंख्यानिर्देशेन यतिः निर्दिष्टा भवति, तस्य चित्रमेकं प्रदीयते -

छन्दोलक्षणे व्यवहृतानि पदानि

अक्षरसंख्या

१) नेत्रम्	३
२) वेदः, समुद्रः, अम्बुधिः, अविथः	४
३) वाणः	५
४) क्रृतुः, रसः, रिपुः	६
५) अश्वः, लोकः, मुनिः, नगः	७
६) वसुः, सर्पः, भोगी, नागः	८
७) ग्रहः	९
८) दिक्, आशा	१०
९) रुद्रः	११
१०) सूर्यः, आदित्यः	१२

*येषां छन्दसां लक्षणे यतेः निर्देशकानि पदानि न उल्लिख्यन्ते, तत्र पादान्ते यतिः स्याद् इति ज्ञातव्यम्।

● पाठ्यानुसारे छन्दःसमूहेर परिचय ➡

(इन्द्रवज्ञा, उपेन्द्रवज्ञा, उपजातिः, शालिनी, भुजङ्गप्रयातम्, वंशस्थविलम्, मालिनी, प्रहर्षिणी, रुचिरा, शिखरिणी, वसन्ततिलकम्, मन्दाक्रान्ता, शार्दूलविक्रीडितम्, स्माधरा)।

● इन्द्रवज्ञा (इन्द्रवज्ञा) (११)

एकादशाक्षरविशिष्ट समवृत्त छन्द हल इन्द्रवज्ञा। आचार्य गङ्गादास 'छन्दोमञ्जरी' ग्रन्थे एই छन्देर लक्षण करेहेन -

'स्यादिन्द्रवज्ञा यदि तौ जगौ गः'

अर्थात् ये समवृत्त छन्देर प्रतिपादे यथाक्रमे 'त, त, ज, ग, ग' - एই गणगुलि थाके, ताके इन्द्रवज्ञा छन्द बले। आलोच छन्देर उदाहरण यथा -

अ र्थो हि | क न्या प | र की य | ए व * (पादान्त गुरु)

तामद्य सम्प्रेष्य परिग्रहीतुः।

जातो ममायं विशदः प्रकामं

प्रत्यर्पितन्यासो इवान्तरात्मा ॥'

अत एव उपर्युक्त श्लोकपादाति यथाक्रमे 'त, त, ज, ग, ग' - एই गणविशिष्ट हउयाय एटि इन्द्रवज्ञा छन्दे रचित हयेहे।

एथाने पादान्त यति हयेहे। उच्चृत श्लोकपादे '*' एই चिह्नेर द्वारा यतिर स्थान निर्देश करा हयेहे। एकादशाक्षरविशिष्ट समवृत्तच्छन्दः हि इन्द्रवज्ञा। आचार्य-गङ्गादासेन 'छन्दोमञ्जरी' इति ग्रन्थे इन्द्रवज्ञाच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

'स्यादिन्द्रवज्ञा यदि तौ जगौ गः' इति।

अर्थात् यस्य समवृत्तच्छन्दसः श्लोकस्य प्रत्येकं पादे यथाक्रमं त, त, ज, ग, ग चेति गणाः सन्ति, तत् पादम् एव इन्द्रवज्ञाच्छन्दसा रचितं भवति। प्रस्तुतस्य छन्दसः उदाहरणं यथा -

अ त्तो हि | क त न्या प | र की य | ए व * (पादान्तः गुरुः)

तामद्य सम्प्रेष्य परिग्रहीतुः।

जातो ममायं विशदः प्रकामं

प्रत्यर्पितन्यास इवान्तरात्मा ॥' इति।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं त, त, ज, ग, ग चेति गणाः सन्ति। अत एव आलोच्य श्लोकपादम् इन्द्रवज्ञाच्छन्दसा रचितं भवति। अत्र पादान्तयतिः जायते। उद्भूतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः।

● उपेन्द्रवज्ञा (उपेन्द्रवज्ञा) (११) -

एकादशाक्षरविशिष्ट समवृत्त छन्द हल उपेन्द्रवज्ञा। आचार्य गङ्गादास ‘छन्दोमञ्जूरी’ ग्रन्थे एই छन्देर लक्षण करते हैं -

‘उपेन्द्रवज्ञा प्रथमे लघौ सा’

अर्थात् इन्द्रवज्ञा छन्देर प्रथम अक्षर लघू हले उपेन्द्रवज्ञा छन्द हय। क्रमान्वये ‘त, त, ज, ग, ग’ - एই पाँचटि गणेर उपस्थितिते इन्द्रवज्ञा छन्द हय। एই छन्देर प्रथम अक्षर लघू हले प्रथम गण ‘त’ एर स्थाने ‘ज’-गण हवे। अत एव ये समवृत्त छन्देर प्रतिपादे यथाक्रमे ‘ज, त, ज, ग, ग’ - एই गणगुलि थाके, ताके उपेन्द्रवज्ञा छन्द बले। आलोच्य छन्देर उदाहरण यथा -

‘उपेत्य नागेन्द्रतुरभगतीर्णे

तमारुणिं दारुणकर्मदक्षम्।

विकीर्णवाणोग्नतरभगतेऽग्नेः

महार्णवाभे युधि नाशयामि ॥’

अत एव उपर्युक्त श्लोकपादे यथाक्रमे ‘ज, त, ज, ग, ग’ - एই गण विद्यमान थाकाय एटि उपेन्द्रवज्ञा छन्दे रचित हयेहे। एखाने पादान्त यति हयेहे। उद्भूत श्लोकपादे ‘*’ एই चिह्नेर द्वारा यतिर स्थान निर्देश करा हयेहे।

एकादशाक्षरविशिष्ट समवृत्तच्छन्दः हि उपेन्द्रवज्ञा। आचार्य-गङ्गादासेन ‘छन्दोमञ्जूरी’ इति ग्रन्थे उपेन्द्रवज्ञाच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

‘उपेन्द्रवज्ञा प्रथमे लघौ सा’ इति।

अर्थात् इन्द्रवज्ञाच्छन्दसः प्रथमः अक्षरः यदि लघूः भवति तर्हि उपेन्द्रवज्ञा छन्दः भवति। क्रमान्वयेन त, त, ज, ग, ग चेति गणानाम् उपस्थितौ इन्द्रवज्ञाच्छन्दः जायते। अस्य छन्दसः प्रथमस्य अक्षरस्य लघूत्वे प्रथमः गणः ‘त’ इत्यस्य स्थाने ‘ज’ इति गणः भवति। अत एव यस्य समवृत्तच्छन्दसः श्लोकस्य प्रत्येकं पादे यथाक्रमं ज, त, ज, ग, ग चेति गणाः सन्ति, तत् पादम् एव उपेन्द्रवज्ञाच्छन्दसा रचितं भवति। प्रस्तुतस्य छन्दसः उदाहरणं यथा -

उ॒ पे॑ त्य॑ | ना॑ गे॑ न्द्र॑ | तु॑ र॑ ल॑ तो॑ | ए॑ *

तमारुणिं दारुणकर्मदक्षम्।

विकीर्णवाणोग्नतरभगतेऽग्नेः

महार्णवाभे युधि नाशयामि ॥’ इति।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं ज, त, ज, ग, ग चेति गणाः सन्ति। अत एव आलोच्य श्लोकपादम् उपेन्द्रवज्ञाच्छन्दसा रचितं भवति। अत्र पादान्तयतिः जायते। उद्भूतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः।

● उपजाति (उपजातिः) (११) -

एकादशाक्षरविशिष्ट समवृत्त छन्द हल उपजाति। आचार्य गङ्गादास ‘छन्दोमञ्जूरी’ ग्रन्थे एই छन्देर लक्षण करते हैं -

‘अनन्तरोदीरितो लक्ष्म्भाजौ

पादो यदीयाबुपजातयन्ताः’

अर्थात् ये श्लोकेर पादगुलि इन्द्रवज्ञा ओ उपेन्द्रवज्ञा छन्देर लक्षणयुक्त हय, तथन ताके उपजाति छन्द बले। क्रमान्वये ‘त, त, ज, ग, ग’ - एই पाँचटि गणेर उपस्थितिते इन्द्रवज्ञा छन्द एवं ‘ज, त, ज, ग, ग’ - एই पाँचटि गणेर उपस्थितिते उपेन्द्रवज्ञा छन्द हय। एই दुइ छन्देर मिश्रणे उपजाति छन्द हय। आलोच्य छन्देर उदाहरण यथा -

‘अथ प्रजानामधिपः प्रभाते

जाया प्रतिग्राहितगन्धमाल्यम्।

बनाय पीतप्रतिबन्धवसां

यशोधनो धेनुमृष्येमुग्मोच ॥’

अत एव उपर्युक्त श्लोकपादे द्वितीय पादे यथाक्रमे 'त, त, ज, ग, ग' - एই गण विद्यमान थाकाय इन्द्रवज्ञा एवं प्रथम, तृतीय ओ चतुर्थ पादे यथाक्रमे 'ज, त, ज, ग, ग' - एই गण विद्यमान थाकाय उपेन्द्रवज्ञा छन्द हयेहे। एই उभयेव संमिश्रणे उपर्युक्त श्लोकटि उपजाति छन्दे रचित हयेहे। एथाने पादान्त यति हयेहे। उद्भूत श्लोके '*' एই चिह्नेर द्वारा यतिर स्थान निर्देश करा हयेहे।

एकादशाक्षरविशिष्टं समवृत्तच्छन्दः हि उपजातिः। आचार्य-गङ्गादासेन 'छन्दोमञ्जरी' इति ग्रन्थे उपजातिच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -
 'अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ
 पादौ यदीयावुपजातयस्ताः' इति।

अर्थात् यस्य श्लोकस्य पादः इन्द्रवज्ञा-उपेन्द्रवज्ञाच्छन्दसः लक्षणयुक्ताः, तदा तत् उपजातिच्छन्दः कथ्यते। क्रमान्वयेन त, त, ज, ग, ग चेति गणानाम् उपस्थितौ इन्द्रवज्ञाच्छन्दः तथा क्रमान्वयेन ज, त, ज, ग, ग चेति गणानाम् उपस्थितौ उपेन्द्रवज्ञाच्छन्दः जायते। एतयोः द्वयोः मिश्रणे उपजातिच्छन्दः भवति। प्रस्तुतस्य छन्दसः उदाहरणं यथा -

'अथ प्रजानामधिपः प्रभाते

जाया प्रतिग्राहितगन्धमाल्यम्।

वनाय पीतप्रतिवद्ववत्सां

यशोधनो धेनुमृष्मर्मुमोच ॥' इति।

अत एव उपर्युक्ते श्लोकपादे द्वितीयपादे यथाक्रमं त, त, ज, ग, ग चेति गणानाम् उपस्थितौ इन्द्रवज्ञाच्छन्दः जायते तथा प्रथमे, तृतीये चतुर्थे च पादे यथाक्रमं ज, त, ज, ग, ग चेति गणानाम् उपस्थितौ उपेन्द्रवज्ञाच्छन्दः जायते। उभयोः संमिश्रणे प्रस्तुतः श्लोकः उपजातिच्छन्दसा रचितः भवति। अत्र पादान्तयतिः जायते। उद्भूतश्लोके '*' इति चिह्नेर यतिनिर्देशः विहितः।

● शालिनी (शालिनी) (११) -

एकादशाक्षरविशिष्टं समवृत्तं छन्दं हल शालिनी। आचार्य गङ्गादास 'छन्दोमञ्जरी' ग्रन्थे एই छन्देर लक्षण करोहेन -

'मात्तो गौ चेच्छालिनी वेदलोकैः'

अर्थात् ये समवृत्तं छन्देर प्रतिपादे यथाक्रमे 'म, त, त, ग, ग' - एই गणगुलि थाके, ताके शालिनी छन्द बले। छन्देर लक्षणे 'वेदलोकैः' पदेर द्वारा 'वेद' संख्याय चार एवं 'लोक' संख्याय सात। सूतराः एই छन्देर प्रतिपादे प्रथमे चतुर्थवर्णेर पर एवं तार परवर्ती सप्तम वर्णेर पर यति हवे। आलोच्य छन्देर उदाहरणं यथा -

'नैवेदानीं दूःखिताश्चक्रवाकाः

नैवाप्यन्ये स्त्रीविशेषैर्वियुक्ताः।

धन्या सा स्त्री यां तथा वेति भर्ता

भर्त्स्नेहाऽ सा हि दग्धापद्यदग्धा ॥'

अत एव उपर्युक्त श्लोकपादटि यथाक्रमे 'म, त, त, ग, ग' - एই गणविशिष्टं होयाय एटि शालिनी छन्दे रचित हयेहे। उद्भूत श्लोकपादे प्रथमे चतुर्थवर्णेर पर एवं तार परवर्ती सप्तम वर्णेर पर यति हयेहे। '*' एই चिह्नेर द्वारा यतिर स्थान निर्देश करा हयेहे।

एकादशाक्षरविशिष्टं समवृत्तच्छन्दः हि शालिनी। आचार्य-गङ्गादासेन 'छन्दोमञ्जरी' इति ग्रन्थे शालिनीच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

'मात्तौ गौ चेच्छालिनी वेदलोकैः' इति।

अर्थात् यस्य समवृत्तच्छन्दसः श्लोकस्य प्रत्येकं पादे यथाक्रमं म, त, त, ग, ग चेति गणाः सन्ति, तत् पादम् एव शालिनीच्छन्दसा रचितं भवति। छन्दसः लक्षणे 'वेदलोकैः' इति पदेन वेद-पदेन चत्वारः, लोक-पदेन च सप्त संख्याः बुध्यन्ते। अतः अस्य छन्दसः श्लोकपादे आदौ चतुर्थवर्णात् परं ततश्च सप्तमवर्णात् परं यतिः भवेत्। प्रस्तुतस्य छन्दसः उदाहरणं यथा -

ऋै॒ मै॑ दा॒ नौ॑ तु॑ः खि॑ ता॑ श्व॑ क्र॑ वा॑ का॑ः*

नैवाप्यन्ये स्त्रीविशेषैर्वियुक्ताः।

धन्या सा स्त्री यां तथा वेति भर्ता

भर्त्स्नेहाऽ सा हि दग्धापद्यदग्धा ॥' इति।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं म, त, त, ग, ग चेति गणाः सन्ति। अत एव आलोच्यश्लोकपादम् शालिनीच्छन्दसा रचितं भवति। अत्र आदौ चतुर्थवर्णात् परं ततश्च सप्तमवर्णात् परं यतिः जायते। उद्धृतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः।

● भूजङ्गप्रयात (भुजङ्गप्रयातम्) (१२)-

द्वादशाक्षरविशिष्ट समवृत्त छन्द हल भूजङ्गप्रयात। आचार्य गणगादास ‘छन्दोमञ्जरी’ ग्रन्थे एই छन्देर लक्षण करेछेन -

‘भूजङ्गप्रयातः चतुर्भिर्यकारैः’

अर्थात् ये समवृत्त छन्देर प्रतिपादे यथाक्रमे ‘य, य, य, य’ - एই गणगूलि थाके, ताके भूजङ्गप्रयात छन्द बले। आलोच्य छन्देर उदाहरण यथा -

‘सदाराज्ञज्ञातिभृत्यो विहाय (पादान्त गुरु)

समेत त्रुदं जीवनं लिप्समानः।

मया क्लेशितं कालियेत्यं कुरु त्वं

भूजङ्ग! प्रयातः द्रुतं सागराय ॥’ (पादान्त गुरु)

अत एव उपर्युक्त श्लोकपादाति यथाक्रमे ‘य, य, य, य’ - एই गणविशिष्टे होयाय एटि भूजङ्गप्रयात छन्दे रचित हयेछे। एখाने पादान्त यति हयेछে। उद्धृत श्लोकपादे ‘*’ एই चिह्नेर द्वारा यतिर स्थान निर्देश करा हयेछे।

द्वादशाक्षरविशिष्ट समवृत्तच्छन्दः हि भुजङ्गप्रयातम्। आचार्य-गङ्गादासेन ‘छन्दोमञ्जरी’ इति ग्रन्थे भुजङ्गप्रयातच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

‘भुजङ्गप्रयातं चतुर्भिर्यकारैः’ इति।

अर्थात् यस्य समवृत्तच्छन्दसः श्लोकस्य प्रत्येकं पादे यथाक्रमं ‘य, य, य, य’ चेति गणाः सन्ति, तत् पादम् एव भुजङ्गप्रयातच्छन्दसा रचितं भवति। प्रस्तुतस्य छन्दसः उदाहरणं यथा -

॥ य दा रा ॥ त्म य ज्ञा ॥ ति भृ त्यो ॥ वि हा य * (पादान्तः गुरुः)

समेत हृदं जीवनं लिप्समानः।

मया क्लेशितः कालियेत्यं कुरु त्वं

भुजङ्ग! प्रयातं द्रुतं सागराय ॥’ (पादान्तः गुरुः) इति।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं य, य, य, य चेति गणाः सन्ति। अत एव आलोच्यश्लोकपादम् भुजङ्गप्रयातच्छन्दसा रचितं भवति। अत्र पादान्तयतिः जायते। उद्धृतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः।

● वंशस्थविल (वंशस्थविलम्) (१२)-

द्वादशाक्षरविशिष्ट समवृत्त छन्द हल वंशस्थविल। आचार्य गणगादास ‘छन्दोमञ्जरी’ ग्रन्थे एই छन्देर लक्षण करेछेन -

‘वदन्ति वंशस्थविलं जतौ जरौ’

अर्थात् ये समवृत्त छन्देर प्रतिपादे यथाक्रमे ‘ज, त, ज, र’ - एই गणगूलि थाके, ताके वंशस्थविल छन्द बले। आलोच्य छन्देर उदाहरण यथा -

‘क्रियासु युक्तेन्द्रप चारचक्षुषो
न बण्डनीयाः प्रभवोहनुजीविभिः।

अतोहसि क्षत्रमसाधु साधु वा
हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः ॥’

अत एव उपर्युक्त श्लोकपादाति यथाक्रमे ‘ज, त, ज, र’ - एই गणविशिष्टे होयाय एटि वंशस्थविल छन्दे रचित हयेछे। एখाने पादान्त यति हयेछে। उद्धृत श्लोकपादे ‘*’ एই चिह्नेर द्वारा यतिर स्थान निर्देश करा हयेछে।

द्वादशाक्षरविशिष्ट समवृत्तच्छन्दः हि वंशस्थविलम्। आचार्य-गङ्गादासेन ‘छन्दोमञ्जरी’ इति ग्रन्थे वंशस्थविलच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

‘वदन्ति वंशस्थविलं जतौ जरौ’ इति।

अर्थात् यस्य समवृत्तच्छन्दसः श्लोकस्य प्रत्येकं पादे यथाक्रमं ‘ज, त, ज, र’ चेति गणाः सन्ति, तत् पादम् एव वंशस्थविलच्छन्दसा रचितं भवति। प्रस्तुतस्य छन्दसः उदाहरणं यथा -

क्रि या सु॑ चु॒ क्ते॑ नृ॒ प॒ चा॑ र॒ च॒ क्षु॑ घो॑

न वञ्चनीयाः प्रभवोऽनुजीविभिः ।

अतोऽहसि क्षन्तुमसाधु साधु वा
हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः ॥’ इति ।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं ‘ज, त, ज, र’ चेति गणाः सन्ति। अत एव आलोच्य श्लोकपादम् वंशस्थविलच्छन्दसा रचितं भवति। अत्र पादान्तयतिः जायते। उद्भूतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः ।

● मालिनी (मालिनी) (१५) -

पञ्चदशाक्षरविशिष्टे समवृत्तं छन्दं हल मालिनी। आचार्य गण्डादास ‘छन्दोमञ्जूरी’ ग्रन्थे ऐसे छन्देर लक्षण करेछेन -
‘न-न-म-य-य-युतेयं मालिनी भोगिलोकैः’

अर्थात् ये समवृत्तं छन्देर प्रतिपादे यथाक्रमे ‘न, न, म, य, य’ - ऐसे गणगुलि थाके, ताके मालिनी छन्द बले। छन्देर लक्षणे ‘भोगिलोकैः’ पदेर द्वारा ‘भोगी’ (नाग) संख्याय आट एवं ‘लोक’ (भूबन) संख्याय सात। सूतराः ऐसे छन्देर प्रतिपादे प्रथमे अष्टमवर्णेर पर एवं तार परवर्ती सप्तम वर्णेर पर यति हवे। आलोच्य छन्देर उदाहरणं यथा -

‘सरसिजमनुविष्ठ॑ शैवलेनापि रम्य॑

मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्मि॑ लक्ष्मी॑ तनोति ।

इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी

किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम् ॥’

अत एव उपर्युक्त श्लोकपादाटि यथाक्रमे ‘न, न, म, य, य’ - ऐसे गणविशिष्टे हउयाय एति मालिनी छन्दे रचित हयेछे। उद्धृत श्लोकपादे प्रथमे अष्टमवर्णेर पर एवं तार परवर्ती सप्तम वर्णेर पर यति हयेछे। ‘*’ ऐसे चिह्नेर द्वारा यतिर स्थान निर्देश करा हयेछे।

पञ्चदशाक्षरविशिष्टं समवृत्तच्छन्दः हि मालिनी। आचार्य-गण्डादासेन ‘छन्दोमञ्जूरी’ इति ग्रन्थे मालिनीच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

‘न-न-म-य-य-युतेयं मालिनी भोगिलोकैः’ इति ।

अर्थात् यस्य समवृत्तच्छन्दसः श्लोकस्य प्रत्येकं पादे यथाक्रमं न, न, म, य, य चेति गणाः सन्ति, तत् पादम् एव मालिनीच्छन्दसा रचितं भवति। छन्दसः लक्षणे ‘भोगिलोकैः’ इति पदेन भोगि-पदेन अष्टौ, लोक-पदेन च सप्त संख्याः बुध्यन्ते। अतः अस्य छन्दसः श्लोकपादे आदौ अष्टमवर्णात् परं ततश्च सप्तमवर्णात् परं यतिः भवेत्। प्रस्तुतस्य छन्दसः उदाहरणं यथा -

न॑ न॑ म॑ य॑ य॑
स॒ र॒ सि॑ | ज॑ म॒ न॒ | वि॑ द्वे॑ * श॑ | व॑ ले॑ ना॑ | पि॑ र॒ च्ये॑ *

मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्मि॑ लक्ष्मी॑ तनोति ।

इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी

किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम् ॥’ इति ।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं न, न, म, य, य चेति गणाः सन्ति। अत एव आलोच्य श्लोकपादम् मालिनीच्छन्दसा रचितं भवति। अत्र आदौ अष्टमवर्णात् परं ततश्च सप्तमवर्णात् परं यतिः जायते। उद्भूतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः ।

● प्रहर्षिणी (प्रहर्षिणी) (१३) -

पञ्चदशाक्षरविशिष्टे समवृत्तं छन्दं हल प्रहर्षिणी। आचार्य गण्डादास ‘छन्दोमञ्जूरी’ ग्रन्थे ऐसे छन्देर लक्षण करेछेन -

‘त्र्याशाभिर्मनजरगाः प्रहर्षिणीश्च’

अर्थात् ये समवृत्तं छन्देर प्रतिपादे यथाक्रमे ‘म, न, ज, र, ग’ - ऐसे गणगुलि थाके, ताके प्रहर्षिणी छन्द बले। छन्देर लक्षणे

‘त्र्याशाभिः’ पदेर द्वारा ‘त्रि’ संख्याय तिन एवं ‘आशा’ (दिक) संख्याय दश। सूतराः एই छन्देर प्रतिपादे प्रथमे तृतीयवर्णेर पर एवं तार परबर्ती दशम वर्णेर पर यति हवे। आलोच्य छन्देर उदाहरण यथा -

‘एष भामभिनवकष्टशेषाग्नितार्थी
शार्दूलः पशुमिव हन्मि चेष्टमानम्।
आर्तनां भयमपनेतुमात्मधन्वा
दुष्यन्तस्त्व शरणं भवत्विदानीम्॥’

अत एव उपर्युक्त श्लोकपादे यथाक्रमे ‘म, न, ज, र, ग’ - एই गणविशिष्टे हउयाय एटि प्रहर्षिणी छन्दे रचित हयेछे। उद्धृत श्लोकपादे प्रथमे तृतीयवर्णेर पर एवं तार परबर्ती दशम वर्णेर पर यति हयेछे। ‘*’ एই चिह्नेर द्वारा यति र स्थान निर्देश करा हयेछे।

त्र्योदशाक्षरविशिष्टं समवृत्तच्छन्दः हि प्रहर्षिणी। आचार्य-गङ्गादासेन ‘छन्दोमङ्गरी’ इति ग्रन्थे प्रहर्षिणीच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -
‘त्र्याशाभिः म-न-ज-र-गाः प्रहर्षिणीयम्’ इति।

अर्थात् यस्य समवृत्तच्छन्दसः श्लोकस्य प्रत्येकं पादे यथाक्रमं म, न, ज, र, ग चेति गणाः सन्ति, तत् पादम् एव प्रहर्षिणीच्छन्दसा रचितं भवति। छन्दसः लक्षणे ‘त्र्याशाभिः’ इति पदेन त्रि-पदेन त्रिसः, आशा-पदेन च दश संख्या: बुध्यन्ते। अतः अस्य छन्दसः श्लोकपादे आदौ तृतीयवर्णात् परं ततश्च दशमवर्णात् परं यतिः भवेत्। प्रस्तुतस्य छन्दसः उदाहरणं यथा -

ए॒ ष त्वा॑* म॒ भि॑ न॒ | व॒ क॑ ए॑ठ | शो॒ णि॑ ता॑ र्थी॑*
शार्दूलः पशुमिव हन्मि चेष्टमानम्।
आर्तनां भयमपनेतुमात्मधन्वा
दुष्यन्तस्त्व शरणं भवत्विदानीम्॥’ इति।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं म, न, ज, र, ग चेति गणाः सन्ति। अत एव आलोच्य श्लोकपादम् प्रहर्षिणीच्छन्दसा रचितं भवति। अत्र आदौ तृतीयवर्णात् परं ततश्च दशमवर्णात् परं यतिः जायते। उद्भृतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेर यति निर्देशः विहितः।

● बूचिरा (रुचिरा) (१३) -

त्र्योदशाक्षरविशिष्टे समवृत्ते छन्द हल बूचिरा। आचार्य गङ्गादास ‘छन्दोमङ्गरी’ ग्रन्थे एই छन्देर लक्षण करेछेन -

‘जभौ सजौ गिति बूचिरा चतुर्ग्रहैः’

अर्थात् ये समवृत्ते छन्देर प्रतिपादे यथाक्रमे ‘ज, भ, स, ज, ग’ - एই गणगुलि थाके, ताके बूचिरा छन्द बले। छन्देर लक्षणे ‘चतुर्ग्रहैः’ पदेर द्वारा ‘चतुर्’ संख्याय चार एवं ‘ग्रह’ संख्याय नय। सूतराः एই छन्देर प्रतिपादे प्रथमे चतुर्थवर्णेर पर एवं तार परबर्ती नवम वर्णेर पर यति हवे। आलोच्य छन्देर उदाहरण यथा -

‘प्रबर्ततां प्रकृतिहिताय पार्थिवः
सरस्वती श्रुतमहतां महीयताम्।
ममापि च क्षपयतु नीललोहितः
पुनर्भवं परिगतशक्तिरात्माभूः।’

अत एव उपर्युक्त श्लोकपादे यथाक्रमे ‘ज, भ, स, ज, ग’ - एই गणविशिष्टे हउयाय एटि बूचिरा छन्दे रचित हयेछे। उद्धृत श्लोकपादे प्रथमे चतुर्थवर्णेर पर एवं तार परबर्ती नवम वर्णेर पर यति हयेछे। ‘*’ एই चिह्नेर द्वारा यति र स्थान निर्देश करा हयेछे।

त्र्योदशाक्षरविशिष्टं समवृत्तच्छन्दः हि रुचिरा। आचार्य-गङ्गादासेन ‘छन्दोमङ्गरी’ इति ग्रन्थे रुचिराच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

‘जभौ सजौ गिति रुचिरा चतुर्ग्रहैः’ इति।

अर्थात् यस्य समवृत्तच्छन्दसः श्लोकस्य प्रत्येकं पादे यथाक्रमं ज, भ, स, ज, ग चेति गणाः सन्ति, तत् पादम् एव रुचिराच्छन्दसा रचितं भवति। छन्दसः लक्षणे ‘चतुर्ग्रहैः’ इति पदेन चतुर्-पदेन चतसः, ग्रह-पदेन च नव संख्या: बुध्यन्ते। अतः अस्य छन्दसः

श्लोकपादे आदौ चतुर्थवर्णात् परं ततश्च नवमवर्णात् परं यतिः भवेत्। प्रस्तुतस्य छन्दसः उदाहरणं यथा -

॥ ज् ॥ व् ॥ त् ॥ तोऽप्रकृति हि ता॒ य॑ पा॒ र्थि॑ वः॒ ॥*

सरस्वती श्रुतमहतां महीयताम्।

ममापि च क्षपयतु नीललोहितः

पुनर्भवं परिगतशक्तिरात्मभूः ॥' इति ।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं ज, भ, स, ज, ग चेति गणाः सन्ति। अत एव आलोच्य श्लोकपादम् रुचिराच्छन्दसा रचितं भवति। अत्र आदौ चतुर्थवर्णात् परं ततश्च नवमवर्णात् परं यतिः जायते। उद्धृतश्लोकपादे '*' इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः।

● शिखरिणी (शिखरिणी) (१७) -

सप्तदशाक्षरविशिष्टं समवृत्तं छन्दं हलं शिखरिणी आचार्य गङ्गादास 'छन्दोमञ्जरी' ग्रन्थे ऐसे छन्देर लक्षण करेछेन -

'रौसै ब्रूद्देश्चिन्ना य-म-न-स-भ-ला गः'

अर्थात् ये समवृत्तं छन्देर प्रतिपादे यथाक्रमे 'य, म, न, स, भ, ल, ग' - ऐसे गणगुलि थाके, ताके शिखरिणी छन्द बले। छन्देर लक्षणे 'रौसै ब्रूद्देः' पदेर द्वारा 'रौस' संख्याय छयाएवं 'ब्रूद्द' संख्याय एगार। सूतरां ऐसे छन्देर प्रतिपादे प्रथमे षष्ठवर्णेर पर एवं तार परवर्ती एकादश वर्णेर पर यति हवे। आलोच्य छन्देर उदाहरण यथा -

'खगा बासोपेताः सलिलमवगाढो मूनिजनः

प्रदीप्तेश्चिभाति प्रविचरति धूमो मूनिवनम्।

परिभ्रष्टो दूरां रविरपि च संक्षिप्तकिरणो

रथं व्यावर्त्यासौ प्रविशति शैनेरस्तशिखरम् ॥'

अत एव उपर्युक्त श्लोकपादे यथाक्रमे 'य, म, न, स, भ, ल, ग' - ऐसे गणविशिष्टं हउयाय एटि शिखरिणी छन्दे रचित हयोहे। उद्धृत श्लोकपादे प्रथमे षष्ठवर्णेर पर एवं तार परवर्ती एकादश वर्णेर पर यति हयोहे। '*' ऐसे चिह्नेर द्वारा यतिर स्थान निर्देश करा हयोहे।

सप्तदशाक्षरविशिष्टं समवृत्तच्छन्दः हि शिखरिणी। आचार्य-गङ्गादासेन 'छन्दोमञ्जरी' इति ग्रन्थे शिखरिणीच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

'रसै रुद्रैच्छन्ना य-म-न-स-भ-ला गः शिखरिणी' इति।

अर्थात् यस्य समवृत्तच्छन्दसः श्लोकस्य प्रत्येकं पादे यथाक्रमं य, म, न, स, भ, ल, ग चेति गणाः सन्ति, तत् पादम् एव शिखरिणीच्छन्दसा रचितं भवति। छन्दसः लक्षणे 'रसै रुद्रैः' इति पदेन रसैरिति पदेन षट्, रुद्रैरिति पदेन च एकादश संख्याः बुध्यन्ते। अतः अस्य छन्दसः श्लोकपादे आदौ षष्ठवर्णात् परं ततश्च एकादशमवर्णात् परं यतिः भवेत्। प्रस्तुतस्य छन्दसः उदाहरणं यथा -

ख॑ ग॑ वा॑ स॑ प॑ त॑ः॑ *॑ स॑ न॑ ल॑ ल॑॑ म॑ व॑ ग॑ द॑ भ॑ म॑ न॑ न॑॑ ज॑ ग॑ ॥*

प्रदीप्तोऽग्निर्भाति प्रविचरति धूमो मूनिवनम्।

परिभ्रष्टो दूरात् रविरपि च संक्षिप्तकिरणो

रथं व्यावर्त्यासौ प्रविशति शैनेरस्तशिखरम् ॥' इति।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं य, म, न, स, भ, ल, ग चेति गणाः सन्ति। अत एव आलोच्य श्लोकपादम् शिखरिणीच्छन्दसा रचितं भवति। अत्र आदौ षष्ठवर्णात् परं ततश्च एकादशमवर्णात् परं यतिः जायते। उद्धृतश्लोकपादे '*' इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः।

● वसन्ततिलक (वसन्ततिलकम्) (१८) -

चतुर्दशाक्षरविशिष्टं समवृत्तं छन्दं हलं वसन्ततिलक। आचार्य गङ्गादास 'छन्दोमञ्जरी' ग्रन्थे ऐसे छन्देर लक्षण करेछेन -

'ज्ञेय॑ वसन्ततिलक॑ तत्त्वां जग॑ गः'

अर्थात् ये समवृत्तं छन्देर प्रतिपादे यथाक्रमे 'त, भ, ज, ज, ग, ग' - ऐसे गणगुलि थाके, ताके वसन्ततिलक छन्द बले। आलोच्य छन्देर उदाहरण यथा -

‘पञ्चाबती नरपतेश्वरी भवित्री
दृष्टा विपत्तिरथ यैः प्रथमं प्रदिष्टा ।
तत्प्रत्ययां कृतमिदं न हि सिद्धवाक्या-
न्युक्रम्य गच्छति विधिः सुपरीक्षितानि ॥’

अत एव उपर्युक्त श्लोकपादाटि यथाक्रमे ‘त, भ, ज, झ, ग’ - ऐसे गणविशिष्ट होयाय एटि वसन्ततिलक छन्दे रचित हयोहे । एथाने पादान्त यति हयोहे । उन्नुत श्लोकपादे ‘*’ ऐसे चिह्ने द्वारा यतिर स्थान निर्देश करा हयोहे ।

चतुर्दशाक्षरविशिष्टं समवृत्तच्छन्दः हि वसन्ततिलकम् । आचार्य-गङ्गादासेन ‘छन्दोमञ्जरी’ इति ग्रन्थे वसन्ततिलकच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

‘ज्ञेयं वसन्ततिलकं तथा जगी गः’ इति ।

अर्थात् यस्य समवृत्तच्छन्दसः श्लोकस्य प्रत्येकं पादे यथाक्रमं ‘त, भ, ज, झ, ग’ चेति गणाः सन्ति, तत् पादम् एव वसन्ततिलकच्छन्दसा रचितं भवति । प्रस्तुतस्य छन्दसः उदाहरणं यथा -

पं ती व॒ | ती भ॑ न॒ र॑ | पं त॑ भ॑ | हि झ॑ भ॑ | ग॑ वि॑ त्र॑ ॥*

दृष्टा विपत्तिरथ यैः प्रथमं प्रदिष्टा ।

तत्प्रत्ययात् कृतमिदं न हि सिद्धवाक्या-

न्युक्रम्य गच्छति विधिः सुपरीक्षितानि ॥’ इति ।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं ‘त, भ, ज, झ, ग’ चेति गणाः सन्ति । अत एव आलोच्य श्लोकपादम् वसन्ततिलकच्छन्दसा रचितं भवति । अत्र पादान्तयतिः जायते । उन्नुतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्ने यतिनिर्देशः विहितः ।

● मन्दाक्रान्ता (मन्दाक्रान्ता) (१७) -

सप्तदशाक्षरविशिष्टं समवृत्तं छन्दं हलं मन्दाक्रान्ता । आचार्य गङ्गादास ‘छन्दोमञ्जरी’ ग्रन्थे ऐसे छन्देर लक्षण करेहेन -

‘मन्दाक्रान्ताम्बुधिरसनगैः मो भनौ तौ गयुग्मम्’

अर्थात् ये समवृत्तं छन्देर प्रतिपादे यथाक्रमे ‘म, भ, न, त, त, ग, ग’ - ऐसे गणगुलि थाके, ताके मन्दाक्रान्ता छन्द बले । छन्देर लक्षणे ‘अम्बुधि-रस-नगैः’ पदेर द्वारा ‘अम्बुधि’ (समूद्र) संख्याय चार, ‘रस’ संख्याय छय एवं ‘नग’ (पर्वत) संख्याय सात । सूतरां ऐसे छन्देर प्रतिपादे प्रथमे चतुर्थवर्णेर पर ओ तार परबर्ती वस्तु वर्णेर पर एवं तार परबर्ती सप्तम वर्णेर पर यति हवे । आलोच्य छन्देर उदाहरण यथा -

‘कश्चिं कान्ताविरहगृहुणा स्वाधिकारां प्रमत्तः

शापेनास्तुं गमितमहिमा वर्षभोग्येण भर्तुः ।

यक्षशक्ते जनकतनयास्नानपूण्योदकेषु

स्निग्धच्छायातरुम् वसतिं रामगिर्याश्रिमेषु ॥ (पादान्त गुरु)

अत एव उपर्युक्त श्लोकपादाटि यथाक्रमे ‘म, भ, न, त, त, ग, ग’ - ऐसे गणविशिष्ट होयाय एटि मन्दाक्रान्ता छन्दे रचित हयोहे । उन्नुत श्लोकपादे प्रथमे चतुर्थवर्णेर पर ओ तार परबर्ती वस्तु वर्णेर पर एवं तार परबर्ती सप्तम वर्णेर पर यति हयोहे । ‘*’ ऐसे चिह्ने द्वारा यतिर स्थान निर्देश करा हयोहे ।

सप्तदशाक्षरविशिष्टं समवृत्तच्छन्दः हि मन्दाक्रान्ता । आचार्य-गङ्गादासेन ‘छन्दोमञ्जरी’ इति ग्रन्थे मन्दाक्रान्ताच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

‘मन्दाक्रान्ताम्बुधि-रस-नगैः मो भनौ तौ ग-युग्मम्’ इति ।

अर्थात् यस्य समवृत्तच्छन्दसः श्लोकस्य प्रत्येकं पादे यथाक्रमं म, भ, न, त, त, ग, ग चेति गणाः सन्ति, तत् पादम् एव मन्दाक्रान्तीच्छन्दसा रचितं भवति । छन्दसः लक्षणे ‘अम्बुधि-रस-नगैः’ इति पदेन अम्बुधि-पदेन चतुर्स्रः, रस-पदेन च षट् तथा नग-पदेन सप्त संख्याः बुध्यन्ते । अतः यस्य छन्दसः श्लोकपादे आदौ चतुर्थवर्णात् परं तत्त्वं षष्ठवर्णात् परं तत्त्वं सप्तमवर्णात् परं यतिः भवेत् । प्रस्तुतस्य छन्दसः उदाहरणं यथा -

म
के श्वित् का|न्तोः^४ वि॒ र॑|ह॑ गु॒ र॑|जा॑ स्वा॑ धि॑|का॑ रात्॒ प्र॑|ग॑ ग॑|तः॑*

शापेनास्तं गमितमहिमा वर्षभोग्येण भर्तुः ।

यक्षश्वके जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु
स्नाथच्छायातरुषु वसतिं रामगिर्याश्रिमेषु ॥' इति ।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं म, भ, न, त, त, ग, ग चेति गणाः सन्ति । अत एव आलोच्य श्लोकपादम् मन्दाक्रान्ताच्छन्दसा रचितं भवति । अत्र आदौ चतुर्थवर्णात् परं ततश्च षष्ठवर्णात् परं ततश्च सप्तमवर्णात् परं यतिः जायते । उद्भूतश्लोकपादे '*' इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः ।

● शार्दूलविक्रीडित (शार्दूलविक्रीडितम्) (१९) -

उनविंशत्यक्षरविशिष्टे समवृत्तं छन्दं हल शार्दूलविक्रीडित । आचार्य गङ्गादास 'छन्दोमञ्जरी' ग्रन्थे एই छन्देर लक्षण करोन्हेन - 'सूर्याश्वैर्म-स-जन्तुताः सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम्'

अर्थात् ये समवृत्तं छन्देर प्रतिपादे यथाक्रमे 'म, स, ज, स, त, त, ग' - एই गणगुलि थाके, ताके शार्दूलविक्रीडित छन्द बले । छन्देर लक्षणे 'सूर्याश्वैः' पदेर द्वारा 'सूर्य' संख्याय बार एवं 'अश्व' (घोड़ा) संख्याय सात । सुतराः एই छन्देर प्रतिपादे प्रथमे द्वादशवर्णेर परं एवं तार परबर्ती सप्तम वर्णेर परं यति हवे । आलोच्य छन्देर उदाहरण यथा -

'विश्वां हरिगाश्चरन्त्यचकिता देशागतप्रत्यया

वृक्षाः पूष्पफलैः समृद्धविभवाः सर्वे दयारक्षिताः ।

भूयिष्ठं कपिलानि गोकुलधनायक्षेत्रवत्यो दिशो

निःसन्दिग्धमिदं तपोवनमयं धूमो हि बह्वाश्रयः ॥'

अत एव उपर्युक्त श्लोकपादे यथाक्रमे 'म, स, ज, स, त, त, ग' - एই गणविशिष्टे हउयाय एटि शार्दूलविक्रीडित छन्दे रचित हयेहे । उद्भृत श्लोकपादे प्रथमे द्वादशवर्णेर परं एवं तार परबर्ती सप्तम वर्णेर परं यति हयेहे । '*' एই चिह्नेर द्वारा यतिर स्थान निर्देश करा हयेहे ।

उनविंशत्यक्षरविशिष्टं समवृत्तच्छन्दः हि शार्दूलविक्रीडितम् । आचार्य-गङ्गादासेन 'छन्दोमञ्जरी' इति ग्रन्थे शार्दूलविक्रीडितच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

'सूर्याश्वैः म-स-ज-स्त-ताः सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम्' इति ।

अर्थात् यस्य समवृत्तच्छन्दसः श्लोकस्य प्रत्येकं पादे यथाक्रमं म, स, ज, स, त, त, ग चेति गणाः सन्ति, तत् पादम् एव शार्दूलविक्रीडितच्छन्दसा रचितं भवति । छन्दसः लक्षणे 'सूर्याश्वैः' इति पदेन सूर्य-पदेन द्वादशा, अश्व-पदेन च सप्त संख्याः बुध्यन्ते । अतः अस्य छन्दसः श्लोकपादे आदौ द्वादशवर्णात् परं ततश्च सप्तमवर्णात् परं यतिः भवेत् । प्रस्तुतस्य छन्दसः उदाहरणं यथा -

म
वि॑ श्री॑ व्ये॑ | ह॑ रि॑ जा॑ | श्वे॑ र॑ न्त्य॑ | च॑ कि॑ तौ॑ | दे॑ शा॑ ग॑ | त॑ प्र॑ त्य॑ | या॑ *

वृक्षाः पुष्पफलैः समृद्धविभवाः सर्वे दयारक्षिताः ।

भूयिष्ठं कपिलानि गोकुलधनायक्षेत्रवत्यो दिशो

निःसन्दिग्धमिदं तपोवनमयं धूमो हि बह्वाश्रयः ॥' इति ।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं म, स, ज, स, त, त, ग चेति गणाः सन्ति । अत एव आलोच्य श्लोकपादम् शार्दूलविक्रीडितच्छन्दसा रचितं भवति । अत्र आदौ द्वादशवर्णात् परं ततश्च सप्तमवर्णात् परं यतिः जायते । उद्भूतश्लोकपादे '*' इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः ।

● वृग्धरा (स्नाधरा) (२१) -

एकविंशत्यक्षरविशिष्टे समवृत्तं छन्दं हल वृग्धरा । आचार्य गङ्गादास 'छन्दोमञ्जरी' ग्रन्थे एই छन्देर लक्षण करोन्हेन -

'वैलोः यानां त्रयेण त्रिमुनियतिष्ठुता वृग्धरा कीर्तितेयम्'

अर्थात् ये समवृत्तं छन्देर प्रतिपादे यथाक्रमे 'म, र, भ, न, य, य, य' - एই गणगुलि थाके, ताके वृग्धरा छन्द बले । छन्देर लक्षणे 'त्रिमुनियतिष्ठुता' पदेर द्वारा 'मूनि' संख्याय सात । सुतराः एই छन्देर प्रतिपादे प्रथमे सप्तमवर्णेर परं ओ तार परबर्ती

সপ্তম বর্ণের পর এবং তার পরবর্তী সপ্তম বর্ণের পর যতি হবে। আলোচ্য ছন্দের উদাহরণ যথা -

‘যা সৃষ্টিঃ শ্বেতুরাদ্যা বহতি বিধিহৃতঃ যা হবিষ্য চ হোক্তী
যে দ্বে কালং বিধিত্বঃ শ্রুতিবিষয়গুণা যা স্থিতা ব্যাপ্য বিশ্বমঃ
যামাহুঃ সর্ববীজপ্রকৃতিরিতি যয়া প্রাণিনঃ প্রাণবন্তঃ
প্রত্যক্ষাভিঃ প্রপন্নস্তনুভিরবতু বস্তাভিরষ্টাভিরীশঃ ।।’

অত এব উপর্যুক্ত শ্লোকপাদটি যথাক্রমে ‘ম, র, ভ, ন, য, য, য’ - এই গণবিশিষ্ট হওয়ায় এটি অগ্ধরা ছন্দে রচিত হয়েছে। উদ্বৃত শ্লোকপাদে প্রথমে সপ্তমবর্ণের পর ও তার পরবর্তী সপ্তম বর্ণের পর এবং তার পরবর্তী সপ্তম বর্ণের পর যতি হয়েছে। ‘*’ এই চিহ্নের দ্বারা যতির স্থান নির্দেশ করা হয়েছে।

একবিংশত্যক্ষরবিশিষ্ট সমবৃত্তচ্ছন্দঃ হি স্বাধৰ। আচার্য-গঙ্গাদাসেন ‘ছন্দোমঞ্জরী’ ইতি গ্রন্থে স্বাধৰাচ্ছন্দসঃ লক্ষণ কৃতম-
‘প্রভৈর্যানাং ত্রয়েণ ত্রিমুনিযতিযুতা স্বাধৰা কীর্তিতেয়ম্’ ইতি।

অর্থাত् যস্য সমবৃত্তচ্ছন্দসঃ শ্লোকস্য প্রত্যেকে পাদে যথাক্রম ম, র, ভ, ন, য, য, য চেতি গণাঃ সন্তি, তত্পাদম্ এব
স্বাধৰাচ্ছন্দসা রচিত ভবতি। ছন্দসঃ লক্ষণে ‘ত্রিমুনিযতিযুতা’ ইতি পদেন মুনি-শব্দেন সপ্ত সংখ্যা: বুধ্যন্তে। অতঃ অস্য ছন্দসঃ
শ্লোকপাদে আদৌ সপ্তমবর্ণাত্ পর ততশ্চ সপ্তমবর্ণাত্ পর ততশ্চ সপ্তমবর্ণাত্ পর যতি: ভবেত্। প্রস্তুতস্য ছন্দসঃ উদাহরণ যথা -

য়া ^ম সৃ ষ্টি: | স্ব ^র ষ্টু রা | দ্যা ^ভ ষ্টু হ | তি ^ন ষ্টু ষ্টি | ষ্টু তং * য়া | ষ্টু ষ্টি দ্যা | ষ্টু ষ্টি হো ত্রী *

যে দ্বে কালং বিধিত্বঃ শ্রুতিবিষয়গুণা যা স্থিতা ব্যাপ্য বিশ্বমঃ।

যামাহুঃ সর্ববীজপ্রকৃতিরিতি যয়া প্রাণিনঃ প্রাণবন্তঃ
প্রত্যক্ষাভিঃ প্রপন্নস্তনুভিরবতু বস্তাভিরষ্টাভিরীশঃ ।।’ ইতি।

উপর্যুক্তে শ্লোকপাদে যথাক্রম ম, র, ভ, ন, য, য, য চেতি গণাঃ সন্তি। অত এব আলোচ্যশ্লোকপাদম্ স্বাধৰাচ্ছন্দসা
রচিত ভবতি। অত্র আদৌ সপ্তমবর্ণাত্ পর ততশ্চ সপ্তমবর্ণাত্ পর ততশ্চ সপ্তমবর্ণাত্ পর যতি: জায়তে। উদ্বৃতশ্লোকপাদে ‘*’ ইতি
চিহ্নেন যতিনির্দেশঃ বিহিতঃ।

□ ছন্দোমঞ্জরীম্ অনুসৃত্য অধোলিখিতানাং চরণানাং পাদানাং বা সংস্কৃতভাষ্যা দেবনাগরীলিপ্যা চ ছন্দোনির্ণয়ঃ করণীয়ঃ-
❖ অর্থে হি কন্যা পরকীয় এব

উত্তরম্ -

অ ^ত থো ^{হি} | কে ^ত ন্যা ^প | র ^{কী} য ^এ | গ ^গ * (পাদান্তঃ গুরুঃ)।

উপর্যুক্তে শ্লোকপাদে যথাক্রম ত, ত, জ, গ, গ চেতি গণাঃ সন্তি। অত এব আলোচ্যশ্লোকপাদম্ ইন্দ্রবজ্রাচ্ছন্দসা রচিত
ভবতি। অত্র পাদান্তযতি: জায়তে। উদ্বৃতশ্লোকপাদে ‘*’ ইতি চিহ্নেন যতিনির্দেশঃ বিহিতঃ। আচার্য-গঙ্গাদাসেন ‘ছন্দোমঞ্জরী’ ইতি
গ্রন্থে ইন্দ্রবজ্রাচ্ছন্দসঃ লক্ষণ কৃতম্ -

‘স্যাদিন্দ্রবজ্রা যদি তৌ জগৌ গঃ’ ইতি।

⇒ ইন্দ্রবজ্রাচ্ছন্দসঃ অনুরূপাঃ পাদাঃ -

- ১) প্রত্যর্পিতন্যাস ইবান্তরাত্মা।
- ২) স্যাদিন্দ্রবজ্রা যদি তৌ জগৌ গঃ।
- ৩) জাতো মমায় বিশাদঃ প্রকামম্।
- ৪) ভানুঃ সকৃদ্য যুক্ততরঙ্গ এব।
- ৫) ষষ্ঠাংশবৃত্তেরপি ধর্ম এষঃ।

❖ উপেত্য নাগেন্দ্রতুরঙ্গতীর্ণে

উত্তরম্ -

ত ^জ পে ত্য | ন্তা ^ত ন্দ্র | তু ^র ঙ্গ | তৌ ^গ *

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं ज, त, ज, ग, ग चेति गणाः सन्ति। अत एव आलोच्यश्लोकपादम् उपेन्द्रवज्ञाच्छन्दसा रचितं भवति। अत्र पादान्तयतिः जायते। उद्धृतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः। आचार्य-गङ्गादासेन ‘छन्दोमञ्जरी’ इति ग्रन्थे उपेन्द्रवज्ञाच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

‘उपेन्द्रवज्ञा प्रथमे लघौ सा’ इति।

⇒ उपेन्द्रवज्ञाच्छन्दसः अनुरूपाः पादाः -

- १) स्ववीर्यगुप्ता हि मनोः प्रसूतिः।
- २) उपेन्द्रवज्ञा प्रथमे लघौ सा।
- ३) प्रजाः प्रजाः स्वा इव तन्द्रयित्वा।

❖ सा निन्दन्ती स्वानि भाग्यानि बाला

उत्तरम् -

सा निन्दन्ती स्वानि भाग्यानि बाला।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं म, त, त, ग, ग चेति गणाः सन्ति। अत एव आलोच्यश्लोकपादम् शालिनीच्छन्दसा रचितं भवति। अत्र आदौ चतुर्थवर्णात् परं ततश्च सप्तमवर्णात् परं यतिः जायते। उद्धृतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः। आचार्य-गङ्गादासेन ‘छन्दोमञ्जरी’ इति ग्रन्थे शालिनीच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

‘मातौ गौ चेच्छालिनी वेदलोकैः’ इति।

⇒ शालिनीच्छन्दसः अनुरूपाः पादाः -

- १) उत्क्षिप्यैनां ज्योतिरेकं जगाम।
- २) धन्या सा स्त्री यां तथा वेत्ति भर्ता।
- ३) भर्तुस्नेहात् सा हि दग्धाप्यदग्धा।
- ४) मातौ गौ चेच्छालिनी वेदलोकैः।
- ५) नैवाप्यन्ये स्त्रीविशेषैर्विर्युक्ता।

❖ सदारात्मजज्ञातिभूत्यो विहाय।

उत्तरम् -

सदारात्मजज्ञातिभूत्यो विहाय (पादान्तः गुरुः))।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं य, य, य, य चेति गणाः सन्ति। अत एव आलोच्यश्लोकपादम् भुजङ्गप्रयातच्छन्दसा रचितं भवति। अत्र पादान्तयतिः जायते। उद्धृतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः। आचार्य-गङ्गादासेन ‘छन्दोमञ्जरी’ इति ग्रन्थे भुजङ्गप्रयातच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

‘भुजङ्गप्रयातं चतुर्भिर्यकारैः’ इति।

⇒ भुजङ्गप्रयातच्छन्दसः अनुरूपाः पादाः -

- १) भुजङ्ग! प्रयातं द्रुतं सागराय।
- २) भुजङ्गप्रयातं चतुर्भिर्यकारैः।
- ३) अरण्ये शरण्ये सदा मां प्रपाहि।
- ४) समेतं हृदं जीवनं लिप्समानः।

❖ स बाल आसीद् वपुषा चतुर्भुजः।

उत्तरम् -

स बाल आसीद् वपुषा चतुर्भुजः।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं ‘ज, त, ज, र’ चेति गणाः सन्ति। अत एव आलोच्यश्लोकपादम् वंशस्थविलच्छन्दसा रचितं

भवति । अत्र पादान्तर्यतिः जायते । उद्भूतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः । आचार्य-गङ्गादासेन ‘छन्दोमञ्जरी’ इति ग्रन्थे वंशस्थविलच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

‘वदन्ति वंशस्थविलं जतौ जरौ’ इति ।

⇒ वंशस्थविलच्छन्दसः अनुरूपाः पादाः -

- १) असंशयं सम्प्रति तेजसा रविः ।
- २) वदन्ति वंशस्थविलं जतौ जरौ ।
- ३) हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः ।
- ४) वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः ।
- ५) श्रिया दुरापः कथमीप्सितो भवेत् ।

❖ सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यम्

उत्तरम् -

सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यम् ।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं न, न, म, य, य चेति गणाः सन्ति । अत एव आलोच्यश्लोकपादम् मालिनीच्छन्दसा रचितं भवति । अत्र आदौ अष्टमवर्णात् परं ततश्च सप्तमवर्णात् परं यतिः जायते । उद्भूतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः । आचार्य-गङ्गादासेन ‘छन्दोमञ्जरी’ इति ग्रन्थे मालिनीच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

‘न-न-म-य-य-युतेयं मालिनी भोगिलोकैः’ इति ।

⇒ मालिनीच्छन्दसः अनुरूपाः पादाः -

- १) किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम् ।
- २) न-न-म-य-य-युतेयं मालिनी भोगिलोकैः ।
- ३) न खलु न खलु वाणः सन्निपात्योऽयमस्मिन् ।
- ४) तुरगखुरहतस्तथापि रेणुः ।
- ५) शलभसमृह इवाश्रमद्गुमेषु ।

❖ एष त्वामभिनवकण्ठशोणितार्थी ।

उत्तरम् -

एष त्वामभिनवकण्ठशोणितार्थी ।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं म, न, ज, र, ग चेति गणाः सन्ति । अत एव आलोच्यश्लोकपादम् प्रहर्षिणीच्छन्दसा रचितं भवति । अत्र आदौ तृतीयवर्णात् परं ततश्च दशमवर्णात् परं यतिः जायते । उद्भूतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः । आचार्य-गङ्गादासेन ‘छन्दोमञ्जरी’ इति ग्रन्थे प्रहर्षिणीच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

‘त्र्याशाभिः म-न-ज-र-गाः प्रहर्षिणीयम्’ इति ।

⇒ प्रहर्षिणीच्छन्दसः अनुरूपाः पादाः -

- १) दुष्यन्तस्तव शरणं भवत्विदानीम् ।
- २) त्र्याशाभिः म-न-ज-र-गाः प्रहर्षिणीयम् ।

❖ प्रवर्ततां प्रकृतिहिताय पार्थिवः ।

उत्तरम् -

प्रवर्ततां प्रकृतिहिताय पार्थिवः ।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं ज, भ, स, ज, ग चेति गणाः सन्ति । अत एव आलोच्यश्लोकपादम् रुचिराच्छन्दसा रचितं भवति । अत्र आदौ चतुर्थवर्णात् परं ततश्च नवमवर्णात् परं यतिः जायते । उद्भूतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः । आचार्य-गङ्गादासेन ‘छन्दोमञ्जरी’ इति ग्रन्थे रुचिराच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

‘जभौ सजौ गिति रुचिरा चतुर्ग्रहैः’ इति।

⇒ रुचिराच्छन्दसः अनुरूपाः पादाः -

- १) सरस्वती श्रुतमहतां महीयताम्।
- २) जभौ सजौ गिति रुचिरा चतुर्ग्रहैः।
- ३) पुनर्भवं परिगतशक्तिरात्मभूः।

❖ खगा वासोपेताः सलिलमवगाढो मुनिजनः।

उत्तरम् -

खगा वासोपेताः सलिलमवगाढो मुनिजनः।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं य, म, न, स, भ, ल, ग चेति गणाः सन्ति। अत एव आलोच्य श्लोकपादम् शिखरिणीच्छन्दसा रचितं भवति। अत्र आदौ षष्ठवर्णात् परं ततश्च एकादशमवर्णात् परं यतिः जायते। उद्भूतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः। आचार्य-गङ्गादासेन ‘छन्दोमञ्जरी’ इति ग्रन्थे शिखरिणीच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

‘रसै रुद्रैच्छिन्ना य-म-न-स-भ-ला गः शिखरिणी’ इति।

⇒ शिखरिणीच्छन्दसः अनुरूपाः पादाः -

- १) वयं तत्त्वान्वेषान्मधुकर! हतास्त्वं खलु कृती।
- २) रसै रुद्रैच्छिन्ना य-म-न-स-भ-ला गः शिखरिणी।
- ३) प्रदीप्तोऽग्निर्भाति प्रविचरति धूमो मुनिवनम्।
- ४) अयं मार्तण्डः किं स खलु तरगैः सर्पभिरितः।
- ५) यदालोके सूक्ष्मं ब्रजति सहसा तद्विपुलताम्।

❖ पद्मावती नरपतेर्महिषी भवित्री

उत्तरम् -

पद्मावती नरपतेर्महिषी भवित्री।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं ‘त, भ, ज, ज, ग’ चेति गणाः सन्ति। अत एव आलोच्य श्लोकपादम् वसन्ततिलकच्छन्दसा रचितं भवति। अत्र पादान्तयतिः जायते। उद्भूतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः। आचार्य-गङ्गादासेन ‘छन्दोमञ्जरी’ इति ग्रन्थे वसन्ततिलकच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

‘ज्ञेयं वसन्ततिलकं तभजा जगौ गः’ इति।

⇒ वसन्ततिलकच्छन्दसः अनुरूपाः पादाः -

- १) रम्याणि वीक्ष्य मधुरांश्च निशाम्य शब्दान्
- २) भावस्थिराणि जननान्तरसौहदाणि।
- ३) ज्ञेयं वसन्ततिलकं तभजा जगौ गः।
- ४) तच्चेतसा स्मरति नूनमबोधपूर्वम्।
- ५) पूर्वं त्वयाप्यभिमतं गतमेवमासीत्।

❖ कश्चित् कान्ताविरहगुरुणा स्वाधिकारात् प्रमत्तः:

उत्तरम् -

कश्चित् कान्ताविरहगुरुणा स्वाधिकारात् प्रमत्तः।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं म, भ, न, त, त, ग, ग चेति गणाः सन्ति। अत एव आलोच्य श्लोकपादम् मन्दाक्रान्ताच्छन्दसा रचितं भवति। अत्र आदौ चतुर्थवर्णात् परं ततश्च षष्ठवर्णात् परं ततश्च सप्तमवर्णात् परं यतिः जायते। उद्भूतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः। आचार्य-गङ्गादासेन ‘छन्दोमञ्जरी’ इति ग्रन्थे मन्दाक्रान्ताच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

‘मन्दाक्रान्ताम्बुधि-रस-नगैः मो भनौ तौ ग-युग्मम्’ इति ।

⇒ मन्दाक्रान्ताच्छन्दसः अनुरूपाः पादाः -

- १) शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशम् ।
- २) मन्दाक्रान्ताम्बुधि-रस-नगैः मो भनौ तौ ग-युग्मम् ।
- ३) या तत्र स्याद् युवतिविषये सृष्टिराद्यैव धातुः ।
- ४) आषाढस्य प्रथमदिवसे मेघमाशिलष्टसानुम् ।
- ५) तीव्राधातप्रतिहततरुः स्कन्दलानैकदन्तः ।
- ६) धर्मरण्यं प्रविशति गजः स्यन्दनालोकभीतः ।

❖ विश्रब्धं हरिणाश्वरन्त्यचकिता देशागतप्रत्यया ।

उत्तरम् -

विश्रब्धं हरिणाश्वरन्त्यचकिता देशागतप्रत्यया ।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं म, स, ज, स, त, त, ग चेति गणाः सन्ति । अत एव आलोच्यश्लोकपादम् शार्दूलविक्रीडितच्छन्दसा रचितं भवति । अत्र आदौ द्वादशवर्णात् परं ततश्च सप्तमवर्णात् परं यतिः जायते । उद्धृतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः । आचार्य-गङ्गादासेन ‘छन्दोमङ्गरी’ इति ग्रन्थे शार्दूलविक्रीडितच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

‘सूर्याश्वैः म-स-ज-स्त-ताः सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम्’ इति ।

⇒ शार्दूलविक्रीडितच्छन्दसः अनुरूपाः पादाः -

- १) वृक्षाः पुष्पफलैः समृद्धविभवाः सर्वे दयारक्षिताः ।
- २) सूर्याश्वैः म-स-ज-स्त-ताः सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम् ।
- ३) यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्ठया ।
- ४) पातुं न प्रथमं व्यवस्थिति जलं युष्मास्वपीतेषु या ।
- ५) शुश्रूषस्व गुरुन् कुरु प्रियसखीवृत्तिं पलीजने ।

❖ या सृष्टिः स्नष्टुराद्या वहति विधिहृतं या हविर्या च होत्री

उत्तरम् -

या सृष्टिः स्नष्टुराद्या वहति विधिहृतं या हविर्या च होत्री ।

उपर्युक्ते श्लोकपादे यथाक्रमं म, र, भ, न, य, य, य चेति गणाः सन्ति । अत एव आलोच्यश्लोकपादम् स्नाधराच्छन्दसा रचितं भवति । अत्र आदौ सप्तमवर्णात् परं ततश्च सप्तमवर्णात् परं ततश्च सप्तमवर्णात् परं यतिः जायते । उद्धृतश्लोकपादे ‘*’ इति चिह्नेन यतिनिर्देशः विहितः । आचार्य-गङ्गादासेन ‘छन्दोमङ्गरी’ इति ग्रन्थे स्नाधराच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

‘प्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्नाधरा कीर्तितेयम्’ इति ।

⇒ स्नाधराच्छन्दसः अनुरूपाः पादाः -

- १) प्रत्यक्षाभिः प्रपन्नस्तनुभिरवतु वस्ताभिरष्टाभिरीशः ।
- २) प्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्नाधरा कीर्तितेयम् ।
- ३) ग्रीवाभङ्गाभिरामं मुहुरनुपतति स्यन्दने दत्तदृष्टिः ।
- ४) पश्योदग्रप्लुतत्वाद् वियति बहुतरं स्तोकमुर्व्या प्रयाति ।
- ५) पश्चार्थेन प्रविष्टः शरपतनभयाद् भूयसा पूर्वकायम् ।

● लघुप्रश्नोत्तराणि

१) 'छन्दोमञ्जरी' इति ग्रन्थस्य रचयिता कः? तस्य पितुः मातुः च नाम किम्?

उत्तरम् - 'छन्दोमञ्जरी' इति ग्रन्थस्य रचयिता आचार्यगङ्गादासः भवति।

◆ आचार्यगङ्गादासस्य पिता हि गोपालदासः, माता च सन्तोषा।

२) 'छन्दोमञ्जरी' इति ग्रन्थः कतिभागेषु विभक्तः जायते? तत्र कति छन्दांसि आलोच्यन्ते?

उत्तरम् - 'छन्दोमञ्जरी' इति ग्रन्थः षट्सु भागेषु विभक्तः जायते।

◆ तत्र २७६ छन्दांसि आलोच्यन्ते।

३) वेदाङ्गेषु छन्दःशास्त्रस्य किं स्थानं वर्तते?

उत्तरम् - वेदाङ्गेषु छन्दःशास्त्रस्य पञ्चमं स्थानं वर्तते।

४) आचार्यगङ्गादासः कुत्र जन्म अलभत?

उत्तरम् - आचार्यगङ्गादासः उत्कलदेशे जन्म अलभत।

५) किं नाम पद्यम्? तच्च कतिविधम्?

उत्तरम् - निर्दिष्टाक्षरेण निर्दिष्टाक्षराया वा नियन्त्रितं पदजातमेव पद्यमिति उच्यते। तदुक्तम् आचार्यगङ्गादासेन 'छन्दोमञ्जरी'

इति ग्रन्थे - 'छन्दोबद्धपदं पद्यम्' इति।

◆ पद्यं द्विविधम् - वृत्तं जातिः चेति। तथा चोच्यते - 'तच्च वृत्तं जातिरिति द्विधा' इति।

६) वृत्तस्य किं लक्षणम्?

उत्तरम् - प्रतिचरणं निर्दिष्टाक्षरानुसारं रचितं पद्यं वृत्तमिति कथ्यते - 'वृत्तमक्षरसंख्यातम्' इति।

७) जातेः लक्षणं किम्?

उत्तरम् - मात्राया संख्यानुसारेण रचितं पद्यं जातिरिति अभिधीयते - 'जातिर्मात्राकृता भवेत्' इति।

८) मात्रा कतिविधा? लिख्यताम्।

उत्तरम् - मात्रा एक-द्वि-त्रि-अर्ध-भेदात् चतुर्विधा भवति।

९) हस्व-दीर्घ-प्लुतभेदेषु कुत्र कति मात्रा इति निर्धार्यताम्।

उत्तरम् - पद्यस्य हस्वस्वरः हि एकमात्रा, दीर्घस्वरः हि द्विमात्रा, प्लुतस्वरः हि त्रिमात्रा, व्यञ्जनवर्णः हि अर्धमात्रा कथ्यते। तदुक्तम् - 'एकमात्रा भवेद् हस्वो द्विमात्रा दीर्घं उच्यते।

त्रिमात्रस्तु प्लुतो ज्ञेयो व्यञ्जनमर्धमात्रकम्॥' इति।

१०) किं नाम अक्षरम्?

उत्तरम् - सव्यञ्जनः सानुस्वारः अथवा शुद्धः स्वरः हि अक्षरमिति कथ्यते।

११) वृत्तस्य लक्षणं किम्? तच्च कतिविधं भवति?

उत्तरम् - आचार्यगङ्गादासेन 'छन्दोमञ्जरी' इति ग्रन्थे वृत्तस्य लक्षणं कृतम् - 'वृत्तमक्षरसंख्यातम्' इति। अर्थात् प्रतिचरणं निर्दिष्टाक्षरानुसारं रचितं पद्यं वृत्तमिति कथ्यते।

◆ तच्च वृत्तं त्रिविधम् - समवृत्तम्, अर्धसमवृत्तम्, विषमवृत्तं चेति। तदुक्तम् आचार्यगङ्गादासेन 'छन्दोमञ्जरी' इति ग्रन्थे

- 'सममर्धसमं वृत्तं विषमञ्जेति तत्त्रिधा' इति।

१२) समवृत्तच्छन्दसः लक्षणं किम्?

उत्तरम् - यस्य वृत्तस्य पादचतुष्टये गुरुलघुक्रमेण समानसंख्यकाक्षराणि सन्ति, तत् समवृत्तमिति उच्यते। यथा -

इन्द्रवज्राच्छन्दसि चत्वारः पादाः एकादशाक्षरविशिष्टाः भवन्ति। यथा -

‘अर्थो हि कन्या परकीय एव
तामद्य सम्प्रव्य परिग्रहीतुः ।
जातो ममायं विशदः प्रकामं
प्रत्यर्पितन्यास इवान्तरात्मा ॥’ इति ।

१३) अर्धसमवृत्तच्छन्दसः लक्षणं किम्?

उत्तरम् - यस्य वृत्तस्य प्रथमस्य तृतीयस्य च पादस्य अक्षरसंख्या समाना वर्तते, तत् अर्धसमवृत्तमिति उच्यते । यथा - पुष्पिताग्राच्छन्दसि प्रथमे तृतीये च पादे द्वादश अक्षराणि तथा द्वितीये चतुर्थे च पादे त्रयोदश अक्षराणि वर्तन्ते । यथा -

‘तुरगखुरहतस्तथा हि रेणः
विटपविषक्तजलाद्र्ववल्कलेषु ।
पतति परिणतारुणप्रकाशः
शलभसमूह इवाश्रमदुमेषु ॥’ इति ।

१४) विषमवृत्तच्छन्दसः लक्षणं किम्?

उत्तरम् - यस्य वृत्तस्य पादचतुष्टये गुरुलघुक्रमेण समानसंख्यकाक्षराणि न सन्ति, तत् विषमवृत्तमिति उच्यते । यथा -

‘विललास गोपरमणीषु
तरणितनयाप्रभोदगता ।
कृष्णनयनचकोरयुगे
दधती सुधांशुकिरणोर्मिविभ्रमम् ॥’ इति ।

अस्मिन् उद्गताच्छन्दसि चत्वारः पादाः एव भिन्नभिन्नाक्षरविशिष्टाः भवन्ति ।

१५) सम-अर्धसम-विषम-वृत्तस्य लक्षणं प्रदीयताम् ।

उत्तरम् - आचार्यगङ्गादासेन ‘छन्दोमङ्गरी’ इति ग्रन्थे वृत्तभेदानां लक्षणं कृतम् -
‘समं समचतुष्पादं भवत्यर्धसमं पुनः ॥
आदिस्तृतीयवद् यस्य पादस्तुर्यो द्वितीयवत् ।
भिन्नचिह्नचतुष्पादं विषमं परिकीर्तितम् ॥’ इति ।

१६) छन्दःशात्रे कति गणाः सन्ति? के च ते?

उत्तरम् - छन्दःशास्त्रे दश गणाः सन्ति ।

◆ते हि - म, य, र, स, त, ज, भ, न, ग, च - चेति ।

१७) गणाः कति अक्षरविशिष्टाः भवन्ति?

उत्तरम् - म, य, र, स, त, ज, भ, न, ग, च - चेति दशगणेषु ग, ल चेति द्वयं विहाय अवशिष्टाः अष्टौ गणाः त्रयः रविशिष्टाः । केवलं ग-गणः ल-गणः चेति एकाक्षरविशिष्टः भवति ।

१८) गुरुलघुप्रदर्शनपूर्वकं गणभेदविषयकः श्लोकः लिख्यताम् ।

उत्तरम् - आचार्यगङ्गादासेन ‘छन्दोमङ्गरी’ इति ग्रन्थे गणस्य लक्षणं कृतम् -

‘मस्त्रिगुरुस्त्रिलघुश्च नकारो भादिगुरुः पुनरादिलघुर्यः ।
जो गुरुमध्यगतो रलमध्यः सोऽन्तगुरुः कथितोऽन्तलघुस्तः ॥
गुरुरेको गकारस्तु लकारो लघुरेककः ।’ इति ।

१९) मगणस्य उदाहरणमेकं प्रदीयताम्?

उत्तरम् - मगणस्य उदाहरणं हि - श्रीदुर्गा । अत्र त्रयः गुरुवर्णाः भवन्ति ।

२०) जगणस्य उदाहरणमेकं प्रदीयताम्?

उत्तरम् - जगणस्य उदाहरणं हि - शिवाय । अत्र मध्यवर्णः गुरुः, आद्यन्तवर्णाँ च लघू भवन्ति ।

२१) तगणस्य उदाहरणमेकं प्रदीयताम्?

उत्तरम् - तगणस्य उदाहरणं हि - जीवन्ति। अत्र अन्तवर्णः लघुः, अवशिष्टौ वर्णौ गुरु भवन्ति।

२२) छन्दःशास्त्रे के गुरुवर्णः भवन्ति?

उत्तरम् - अनुस्वारयुक्तः वर्णः, दीर्घस्वरयुक्तः वर्णः, विसर्गयुक्तवर्णः, संयुक्तवर्णस्य पूर्ववर्णः तथा पादान्तस्थितः वर्णः विकल्पेन गुरुः भवति। यथा -

१) अनुस्वारयुक्तः वर्णः गुरुः भवति। यथा - तं, तम्।

२) दीर्घस्वरयुक्तः वर्णः गुरुः भवति। यथा - सा, काली।

३) विसर्गयुक्तवर्णः गुरुः भवति। यथा - सः, कः।

४) संयुक्तवर्णस्य पूर्ववर्णः गुरुः भवति। यथा - दक्षः (क् +ष = क्ष)।

५) पादान्तस्थितः वर्णः विकल्पेन गुरुः भवति। यथा - 'अर्थो हि कन्या परकीय एव' - अत्र पादस्य अन्तवर्णः यद्यपि लघुः भवति तथापि छन्दसः लक्षणानुसारं विकल्पेन गुरुः जायते। आचार्यगङ्गादासेन 'छन्दोमङ्गरी' इति ग्रन्थे गुरुवर्णस्य लक्षणं कृतम् -

'सानुस्वारश्च दीर्घश्च विसर्गो च गुरुभवेत्।'

वर्णः संयोगपूर्वश्च तथा पादान्तगोऽपि वा।।' इति।

२३) छन्दःशास्त्रे के लघुवर्णः भवन्ति?

उत्तरम् - छन्दःशास्त्रे अ, इ, उ, ऋ चेति चत्वारः हि लघुवर्णः भवन्ति। यथा - अयम्, हि, मधु, ऋतम्।

२४) यते: स्वरूपं प्रदर्शयताम्। तस्याः नामान्तरं किम्?

उत्तरम् - पद्याठस्य समये जिह्वायाः ईस्तिं विश्रामस्थानमेव छन्दःशास्त्रे यतिः इति कथ्यते। आचार्यगङ्गादासेन 'छन्दोमङ्गरी' इति ग्रन्थे यते: लक्षणं कृतम् -

'यतिर्जिह्वेष्टविश्रामस्थानं कविभिरुच्यते।

सा विच्छेदविरामाद्यैः पदैर्वाच्या निजेच्छया।।' इति।

◆ एषा यतिः विच्छेदः, विरामः, छिदः, भिदः, विरतिः चेत्यादिनामभिः अभिहिता भवति।

२५) कुत्र पादान्ता यतिः स्यात्?

उत्तरम् - येषां छन्दसां लक्षणे यते: निर्देशकानि पदानि न उल्लिख्यन्ते, तत्र पादान्ते यतिः स्याद् इति ज्ञातव्यम्। यथा - 'स्यादिन्द्रवज्ञा यदि तौ जगौ गः' इति इन्द्रवज्ञाच्छन्दसि यतिबोधकानां पदानाम् अभावात् श्लोकपादान्ते यतिः भवति।

२६) आचार्य-गङ्गादासेन 'छन्दोमङ्गरी' इति ग्रन्थे इन्द्रवज्ञाच्छन्दसः लक्षणं किं कृतम्?

उत्तरम् - आचार्य-गङ्गादासेन 'छन्दोमङ्गरी' इति ग्रन्थे इन्द्रवज्ञाच्छन्दसः लक्षणं कृतम् - 'स्यादिन्द्रवज्ञा यदि तौ जगौ गः' इति।

२७) इन्द्रवज्ञाच्छन्दसि कति अक्षराणि सन्ति?

उत्तरम् - इन्द्रवज्ञाच्छन्दसि एकादश अक्षराणि सन्ति।

२८) 'उपेन्द्रवज्ञा प्रथमे लघौ सा' इति लक्षणे के गणाः सन्ति?

उत्तरम् - 'उपेन्द्रवज्ञा प्रथमे लघौ सा' इति लक्षणे ज, त, ज, ग, ग चेति गणाः सन्ति।

२९) 'मात्तौ गौ चेच्छालिनी वेदलोकैः' इति लक्षणे 'वेदलोकैः' इति पदेन किं सूच्यते?

उत्तरम् - 'मात्तौ गौ चेच्छालिनी वेदलोकैः' इति लक्षणे 'वेदलोकैः' इति पदेन वेद-पदेन चत्वारः, लोक-पदेन च सप्त संख्याः बुध्यन्ते। अतः अस्य छन्दसः श्लोकपादे आदौ चतुर्थवर्णात् परं ततश्च सप्तमवर्णात् परं यतिः भवेत्।

३०) यथाक्रमं 'य, य, य, य' चेति गणानाम् उपस्थितौ किं छन्दः जायते?

उत्तरम् - यथाक्रमं 'य, य, य, य' चेति गणानाम् उपस्थितौ भुजङ्गप्रयातच्छन्दः जायते। आचार्य-गङ्गादासेन 'छन्दोमङ्गरी' इति ग्रन्थे भुजङ्गप्रयातच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

'भुजङ्गप्रयातं चतुर्भिर्यकारैः' इति।

३१) वंशस्थविलच्छन्दसि कुत्र यतिः जायते?

उत्तरम् - वंशस्थविलच्छन्दसि पादान्ते यतिः जायते ।

३२) 'हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः' इति श्लोकपादे किं छन्दः जायते?

उत्तरम् - 'हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः' इति श्लोकपादे वंशस्थविलच्छन्दः जायते ।

३३) मालिनीच्छन्दसः लक्षणं किम्?

उत्तरम् - आचार्य-गङ्गादासेन 'छन्दोमञ्जरी' इति ग्रन्थे मालिनीच्छन्दसः लक्षणं कृतम् -

'न-न-म-य-य-युतेयं मालिनी भोगिलोकैः' इति ।

३४) 'त्र्याशाभिः म-न-ज-र-गा: प्रहर्षिणीयम्' इति लक्षणे 'त्र्याशाभिः' इति पदेन किं सूच्यते?

उत्तरम् - 'त्र्याशाभिः म-न-ज-र-गा: प्रहर्षिणीयम्' इति लक्षणे 'त्र्याशाभिः' इति पदेन त्रि-पदेन त्रिसः, आशा-पदेन च दश संख्या: बुध्यन्ते । अतः अस्य छन्दसः श्लोकपादे आदौ तृतीयवर्णात् परं ततश्च दशमवर्णात् परं यतिः भवेत् ।

३५) 'जभौ सजौ गिति ——— चतुर्ग्रहैः' इति लक्षणे रिक्तस्थानं पूरयत ।

उत्तरम् - 'जभौ सजौ गिति रुचिरा चतुर्ग्रहैः' इति भवति ।

३६) 'रसै रुद्रैच्छिन्ना य-म-न-स-भ-ला ग: ———' इति लक्षणे रिक्तस्थानं पूरयत ।

उत्तरम् - 'रसै रुद्रैच्छिन्ना य-म-न-स-भ-ला ग: शिखरिणी' इति भवति ।

३७) वसन्ततिलकच्छन्दसि कति अक्षराणि सन्ति?

उत्तरम् - वसन्ततिलकच्छन्दसि चतुर्दश अक्षराणि सन्ति ।

३८) 'ज्ञेयं वसन्ततिलकं तभजा जगौ गः' इति लक्षणे रिक्तस्थानं पूरयत ।

उत्तरम् - 'ज्ञेयं वसन्ततिलकं तभजा जगौ गः' इति भवति ।

३९) 'मन्दाक्रान्ताम्बुधि-रस-नगैः मो भनौ तौ ग-युग्मम्' इति लक्षणे 'अम्बुधि-रस-नगैः' इति पदेन किं सूच्यते?

उत्तरम् - 'मन्दाक्रान्ताम्बुधि-रस-नगैः मो भनौ तौ ग-युग्मम्' इति लक्षणे 'अम्बुधि-रस-नगैः' इति पदेन अम्बुधि-पदेन चतसः, रस-पदेन च षट् तथा नग-पदेन सप्त संख्या: बुध्यन्ते । अतः अस्य छन्दसः श्लोकपादे आदौ चतुर्थवर्णात् परं ततश्च सप्तमवर्णात् परं यतिः भवेत् ।

४०) 'सूर्याश्वैः' इति पदेन कति अक्षराणि ज्ञायन्ते?

उत्तरम् - 'सूर्याश्वैः' इति पदेन सूर्य-पदेन द्वादश, अश्व-पदेन च सप्त संख्या: बुध्यन्ते ।

४१) 'प्रभैर्यनां त्रयेण त्रिमुनियतियुता ——— कीर्तियेयम्' इति लक्षणे रिक्तस्थानं पूरयत ।

उत्तरम् - 'प्रभैर्यनां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्नाधरा कीर्तियेयम्' इति भवति ।

४२) 'प्रभैर्यनां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्नाधरा कीर्तियेयम्' इति स्नाधराच्छन्दसि 'प्रभैर्यनाम्' इति के गणाः प्रतिपादिताः?

उत्तरम् - 'प्रभैर्यनां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्नाधरा कीर्तियेयम्' इति स्नाधराच्छन्दसि 'प्रभैर्यनाम्' इति म, र, भ, न, य, य, य चेति गणाः प्रतिपादिताः ।

४३) '————— म-स-ज-स्त-ता: सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम्' इति लक्षणे रिक्तस्थानं पूरयत ।

उत्तरम् - 'सूर्याश्वैः म-स-ज-स्त-ता: सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम्' इति भवति ।

४४) 'धन्या सा स्त्री यां तथा वेति भर्ता' इति कस्य छन्दसः उदाहरणं जायते?

उत्तरम् - 'धन्या सा स्त्री यां तथा वेति भर्ता' इति शालिनीच्छन्दसः उदाहरणं जायते ।

४५) 'प्रभैर्यनां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्नाधरा कीर्तियेयम्' इति स्नाधराच्छन्दसि 'त्रिमुनियतियुता' इति पदेन किं सूच्यते?

उत्तरम् - 'प्रभैर्यनां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्नाधरा कीर्तियेयम्' इति स्नाधराच्छन्दसि 'त्रिमुनियतियुता' इति पदेन मुनि-शब्देन सप्त संख्या: बुध्यन्ते । अतः अस्य छन्दसः श्लोकपादे आदौ सप्तमवर्णात् परं ततश्च सप्तमवर्णात् परं यतिः भवेत् ।